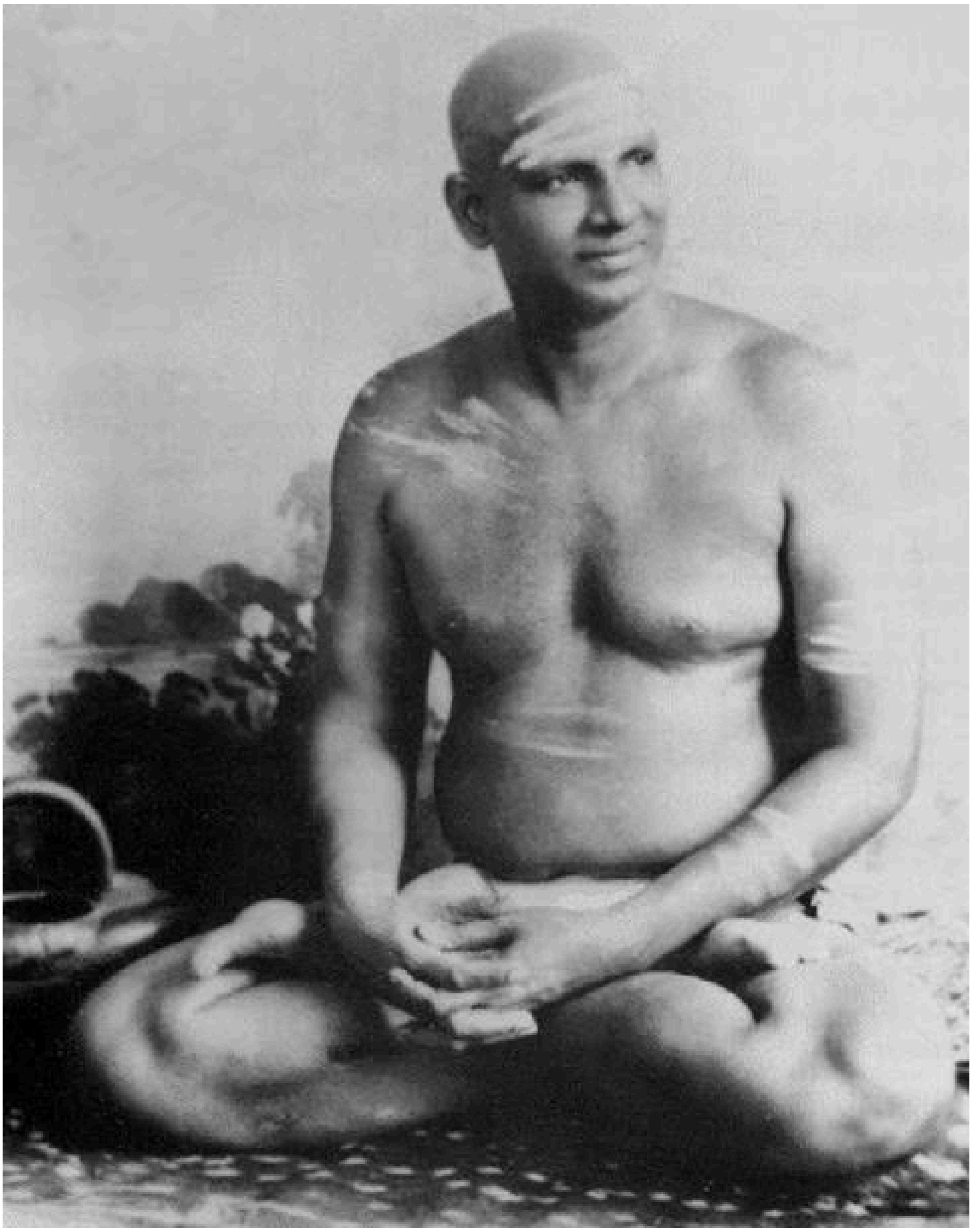
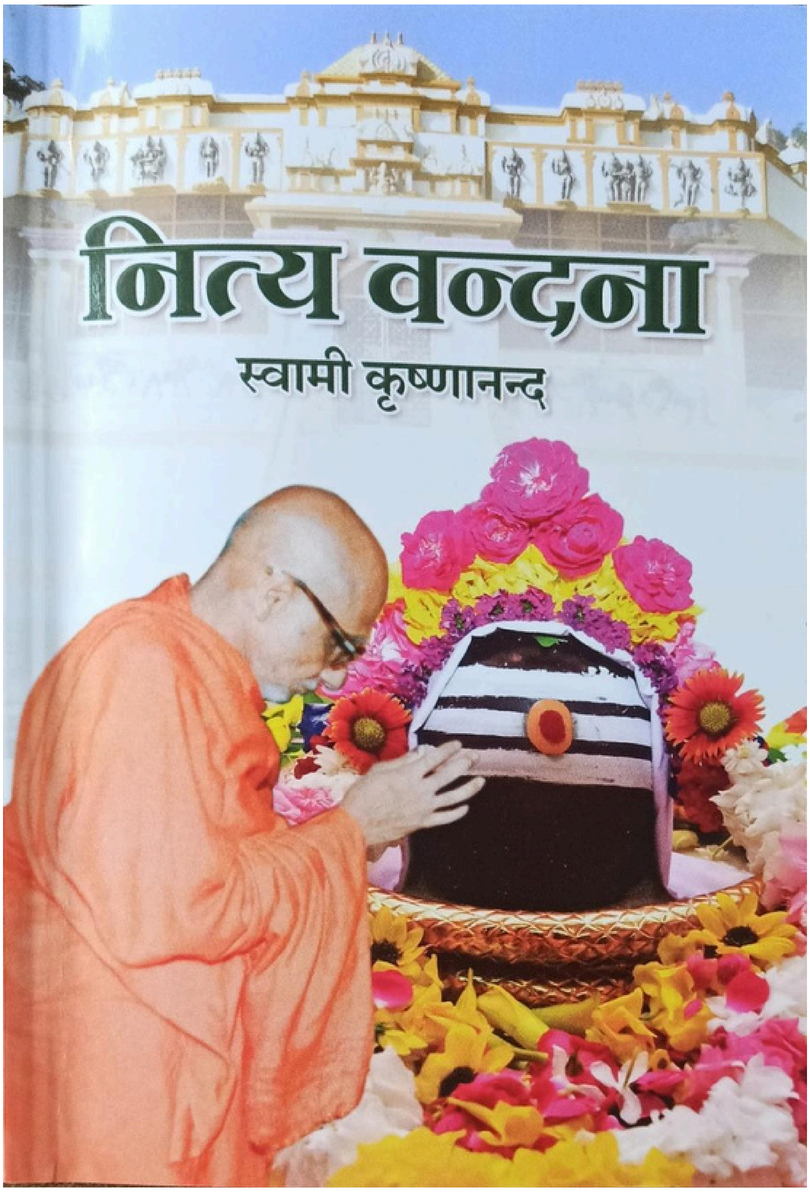



नित्य वन्दना
स्वामी कृष्णानन्द

नित्य वन्दिा

(परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णािन्दजीमहाराजकीपुस्तक 'Daily Invocations' का नहन्दी अिुवाद)

अिुवादका

स्वामी गुरुवत्सलािन्द माता जी

प्रकाशक

द निवाइि लाइफ सोसायटी

पत्रालय : नशवािन्दिगर-२४९ १९२

नजला: नटहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड (नहमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम नहन्दी संस्करण : २०२२

(१,००० प्रनतयााँ)

HK5

PRICE:45/-

'द निवाइ लाइफ सोसायटी, नशविान्दिगर' के नलए
स्वामी पद्माभिान्द द्वारा प्रकानशत तथा उन्हीं के द्वारा
'योग-वेदान्त फारेस्ट एकोमी पे्रस,
पो. नशविान्दिगर-२४९ १९२, नजला नटहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुनित ।
For online orders and Catalogue visit: dlsbooks.org

परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के
जन्म शताब्दी महोत्सव के पावन अवसर पर प्रकाशशत

प्रकाशकीय

प्रायः मन्दन्दरों ंमें भगवि् के नवग्रह का अनभषेक करते समय शतरुिी, पुरुष सूक्त, ि ारायण सूक्त एवं श्री सूक्त का क्रनमक रूप में वाचि नकया जाता है। ये वैनदक सूक्त सववशन्दक्तमि् प्रभु की 'भगवि् रुि-नशव' के रूप

में, भगवि् िारायण की 'नवराट् पुरुष' तथा भगवती लक्ष्मी की 'समृन्दि की अनिष्ठात्री देवी' के रूप में सुतुनत एवं वन्दि स्वरूप हैं।

शतरुिी, जो रुि-अध्याय िाम से भी जािा जाता है, यजुवेद का अंग है तथा यह भगवि् नशव अथवा रुि के रूप में सृनिकताव की ऐसी भव्य झााँकी प्रसुतुत करता है जहााँ सृनि के अणु-अणु में उिकी नवस्मयकारी नवद्यमािता को दशावया गया है। इसमें भगवि् एवं िमव के नवषय में सामान्य अविारणाएँ, मािवीय नवचार की सीमाओं ंको लााँघकर उस भव्य नवनविता को उद्घानटत करती हैं नजससे भगवि् ि इस समस्त सृनि के रूप में सृनजत नकया है। भगवद्-भन्दक्त के इस व्यापक दृनिकोण में शतरुिी, पुरुष सूक्त के समाि ही है।

पुरुष सूक्त उि नदव्य पुरुष का स्तवि है, नजन्हें हम िारायण अथवा नवराट् पुरुष कह सकते हैं। इस सूक्त में हमें ब्रह्माण्ड की उत्पनत्त सम्बन्धी संकेत भी प्राप्त होता है नक भगवि् ि केवल सृनि की प्रत्येक वसुतु में प्रनवि हो कर उसे पररव्याप्त नकये हुए हैं, अनपतु वे स्वयं ही वह उपादाि-सामग्री है नजससे यह समूपूणव सृनि निनमवत हुई है। अतः जो कुछ भी भूतकाल में था, जो अभी है तथा जो भी भनवष्य में होगा-उसे नदव्य माि गया है तथा परम-पुरुष के रूप में वन्दिा की गयी है। 'समूपूणव जीवि ही यज्ञ है', इस महाि् भारतीय परम्परा का उद्गम-स्रोत यही वैनदक सूक्त है जहााँ भगवि् द्वारा सृनि के कायव को, उिके द्वारा सम्पन्न प्रथम यज्ञ कहा गया है; इस यज्ञ में माोि भगवाि स्वयं की आहुनत देते हुए समस्त ब्रह्माण्ड के रूप में प्रकट होते हैं। इस प्रकार मिुष्यों ंद्वारा नकये जािे वाले नकसी भी प्रकार के यज्ञ अथवा सेवा कायव में पररलनित आत्म-त्याग में, इस प्रथम नदव्य यज्ञ का उच्चतम भाव समानहत है।

यज्ञ अथवा आत्म-त्याग वह नक्रया है नजसके द्वारा मिुष्य अन्य बि जाता है, अथावत् वह स्वयं को अन्य में देखता है तथा उससे वही व्यवहार करता है जैसा वह स्वयं से करता है। यही िमव का प्रारम्भ है-'तानि िमावनण प्रथमान्यासि्' । सृनि के यही प्रारन्दम्भक नसिान्त, इस जगत् के समस्त िमव एवं सदाचार का मूल स्रोत बिे।

पुरुष सूक्त में ही प्रथम बार समाज की चतुववणी व्यवस्था का उल्लेख प्राप्त होता है जहााँ ब्राह्मण, िनत्रय, वैश्य एवं शूि क्रमशः समाज के आध्यान्दत्मक, राजिीनतक, आनथवक एवं श्रमजीवी पिों ंके प्रतीक मािे गये हैं। इस छोटे-से सूक्त में हमें नचन्ति की ऐसी अद्भुत व्यापकता एवं सववसमावेनशता प्राप्त होती है नजसमें समस्त दाशवनिक, आध्यान्दत्मक एवं सामानजक मूल्यों ंके शन्दक्तशाली बीज निनहत हैं।

िारायण सूक्त परम पुरुष का सृनि के जिक के रूप में वन्दि-आरािि है जो अनचन्तिीय, परात्पर तत्त्व होते हुए भी प्रत्येक प्राणी के हृदय में नवराजमाि हैं तथा उसके निकट से निकटतम हैं। यह ध्याि की लघु परनुतु सूक्ष्मतम नवनि है नजसके माध्यम से जीवात्मा, परमात्मा के साथ एकरूप होिे का प्रयास करती है।

श्री सूक्त भगवती महालक्ष्मी की, समस्त प्रकार की समृन्दि- भौनतक, सामानजक एवं आध्यान्दत्मक समृन्दि की अनिष्ठात्री देवी के रूप में सुतुनत है। इसमें उन्हें िि-सम्पदा की 'देवी' सम्बोनित करते हुए स्त्रीवाचक शब्द प्रयुक्त हुआ है। यह मािवीय नचन्ति की इस परम्परा का पालि करते हुए नकया गया है नक सृनि भगवि् की शन्दक्त, भगवि् की मनहमा की द्योतक है अतः भगवि् की इस शन्दक्त एवं मनहमा की पूजा-आराििा करिे हेतु इसे भगवि् की पत्नी स्वरूप माि गया है। वसुतुतः भगवि् एवं उिकी शन्दक्त मिुष्यों ंद्वारा मूल्यांकि की सीमा से परे हैं, अतः वे स्त्री एवं पुरुष की अविारणा से भी परे हैं।

पुस्तक 'नित्य वन्दिा' में, इि नदव्य वैनदक सूक्तों ंका उिके मूल मन्त्रों ंसनहत नहन्दी अिुवाद प्रसुतुत नकया गया है। हम आशा करते हैं नक यह पुस्तक भक्तजिों ंकी दैनिक उपासिा-प्राथविा के नलए अत्यन्त उपयोगी नसि होगी।

शतरुिी की महत्ता

यजुवेद का रुिाध्याय अथवा शतरुिी, भगवाि् रुि-नशव िाम से अनभनहत सववव्यापक-सववशन्दक्तमाि्
तत्त्व के प्रनत एक अत्यन्ता भावपूणव सुतुनत है। वह परम तत्त्व सृनि के पालिाथव समस्त शुभ एक कल्याणकारी रूपों ंमें नवद्यमाि है तथा उि नवकराल रूपों ंमें भी वही है जो वह सृनि के प्रलय एवं नविाश हेतु िारण करता है। अपिे इि दो मुख्य पिों ंअथावत् पालि एवं नविाश, रचिात्मक एवं नवधंवंसात्मक, सकारात्मक एवं िकारात्मक के अनतररक्त, वह परम तत्त्व हमारे नदि-प्रनतनदि के व्यावहाररक जीवि में भी पररपूणव रूप में नवद्यमाि है, उसकी इस नवद्यमािता के पीछे एक गूढ़ रहस्य निनहत है नजसे समझिा अत्यन्त कनठि है।

सामान्यतः िानमवक मिुष्य भगवाि् को इस नवश्व से परे, इस ब्रह्माण्ड से परे एक नदव्य सत्ता माि्ते हैं, इस
महाि् सुतुनत 'शतरुिी' का उद्देश्य भगवाि् के नवश्वातीत होिे की अविारणा को नमटािा है, तथा मिुष्य के हृदय में
इस महाितम एवं गहितम ज्ञाि को स्थानपत करिा है नक भगवाि् इस ब्रह्माण्ड से परे, ब्रह्माण्ड के साथ मात्र िहीं ं
हैं अनपतु वे सृनि के अणु-अणु में, समय के प्रत्येक िण में, सदा-सववदा नवद्यमाि हैं।

इस अद्भुत सुतुनत में भगवाि् के एक अत्यनिक रोचक- रहस्यमय पि को प्रसुतुत नकया गया है नक
भगवाि् शुभ एवं अशुभ, सुन्दर एवं कुरूप, उनचत एवं अिुनचत, सकारात्मक एवं िकारात्मक, उच्च एवं निम्न,
कल्पिीय एवं अकल्पिीय, िश्वर एवं अिश्वर, अन्दस्तत्व एवं अिन्दस्तत्व दोिों ंही हैं; प्रत्येक अविारणा तथा उसकी
नवपरीत अविारणा, दोिों ंही भगवाि् के अन्दस्तत्व में सन्दिनलत हैं। श्वेत वणव का नवपरीत श्याम वणव है, और भगवाि्

श्वेेत एवं श्याम दोिों ही हैं। यनद हम कहते हैं नक अमुक वसुतु अच्छी है, तो उस वसुतु का भी होिा आवश्यक है नजसे बुरी कहा जा सके। परनुतु भगवाि् इि दोिों िोिों का नमनश्रत रूप नलये एक लोकातीत सत्ता हैं जो ि अच्छी है, ि बुरी है तथानप अच्छी एवं बुरी दोिों है; ज्ञाता एवं जे्ञेय दोिों है। भगवदीय सत्ता में नवपरीतात्मक तत्त्वों की इस नवद्यमािता एवं सनम्मश्रण में मिुष्य का प्रते्येक प्रकार का नवचार, अिुभव एवं संवेदिा समानहत हैं।

जैसा नक हमें कभी-कभी कहा जाता है नक समू्पूणव जीवि एक युिे्त्र के अनतररक्त कुछ िहीं है; यह महाभारत की वह युिभूनम है जहााँ परस्पर नवरोिी शनक्तयााँ निरन्तर संघषवरत हैं क्योंनक ब्रह्माण्ड स्वयं को अनस्तत्व के एक ही प्रकार की सतत नवद्यमािता के माध्यम से प्रसुतुत िहीं करता है, अनपतु यह नवपरीत तत्त्वों के नमश्रण के रूप में स्वयं को प्रसुतुत करता है । हम इन्हें अनभकेन्द्रीय एवं अपकेन्द्रीय शनक्तयााँ कह सकते हैं- अनभकेन्द्रीय शनक्तयााँ वे हैं जो केन्द्र की ओर अनभमुख हैं तथा अपकेन्द्रीय शनक्तयााँ वे हैं जो केन्द्र से पराङ्मुख होकर ब्रह्माण्ड की पररनि, अथावत् इनन्द्रय पदाथों की ओर गनतमाि हैं। सववत्र नवकास की प्रनक्रया में होिे वाले, दो प्रवृनत्तयों के संघषव का िेत्र ही जीवि का यह युिे्त्र है, जहााँ एक प्रवृनत्त ब्रह्माण्ड के केन्द्र की ओर अनभमुख है तथा उसकी नवपरीत प्रवृनत्त केन्द्र से नवमुख होकर ब्रह्माण्ड की पररनि की ओर गनतमाि है।

इस प्रकार, जब भी हमारी दृनि, हमारा बोि एवं अविारणाएँ, केन्द्रानभमुख प्रवृनत्तयों के साथ समस्वररत हो जाती हैं, तो हम सववत्र भ शुभ, सुन्दर, सुखद एवं नप्रय वसुतुएँ देखते हैं; परनुतु जब हमारा बोि स एवं दृनिकोण, केन्द्र से नवमुख होकर बाह्य-वसुतुओं की ओर जािे वाली प्रवृनत्तयों में आबि हो जाता है और हमारी चेतिा बनहमुवखी बि जाती है, तो वसुतुएँ हमें अशुभ, कुरूप, दुःखद एवं अनप्रय प्रतीत होिे लगती हैं। अतः वसुतुओं में इस नवसंगनत का बोि ब्रह्माण्डीय संरचिा में नवसंगनत के कारण िहीं होता है क्योंनक ब्रह्माण्ड में कहीं नवसंगनत िहीं है, नवसंगनत का यह बोि अनस्तत्व की समग्रता को एक साथ ग्रहण करिे की मािवीय अिमता के कारण होता है। मािवीय बोि के उपकरण 'मि' की यही दुबवलता है नक यह वसुतुओं को केवल नवभानजत करके ही जाि सकता है।

रुद्राध्याय हमें माित्व के इस व्यनक्तगत दृनिकोण एवं बोि से ऊपर उठाता है तथा हमें ब्रह्माण्ड की प्रते्येक छोटी-से-छोटी वसुतु में उस परम तत्त्व के दशवि की पे्ररणा देता है चाहे वे वसुतुएँ नप्रय अथवा अनप्रय, शुभ अथवा अशुभ, आवश्यक अथवा अिावश्यक, सुखद अथवा दुःखद हों। केवल यहीं हम भयनमनश्रत आश्चयव के साथ पढ़ते हैं। नक भगवाि् का चोरों–डाकुओं के अनिपनत के रूप में (तस्कराणां पतये िमः) तथा उस रूप में भी वन्दि-अनभिन्दि नकया गया है जो कल-कारखािों, गनलयों, पृथ्वी, जल, अनि, वायु एवं आकाश अथावत् सृनि के समस्त वसुतु-पदाथों में नवद्यमाि है।

रुद्र-अध्याय अथवा शतरुद्री, समू्पूणव ब्रह्माण्ड का अथवा भगवाि् के नवराट् स्वरूप का, उस परम तत्त्व के रूप में ध्याि है जो सृनि के पूवव एवं उसके पश्चात् भी नवद्यमाि रहता है तथा नजसमें समस्त सृनि उससे एकरूप होकर समानहत है। मिुष्य का मि यहााँ कायव िहीं कर सकता है अथावत् इस सत्य को समझ िहीं सकता है; क्योंनक एक ही समय पर समस्त वसुतुओं का, उिके प्रते्येक प्रकार एवं रूप में नचन्ति कर पािा माित्व-मि के नलए सववथा असम्भव है। माित्व-मि का स्वयं को शारीररक एवं भौनतक सीमाओं से ऊपर उठाकर, ब्रह्माण्ड को दृिा एवं दृश्य युक्त एक तत्त्व के रूप में पररकनल्पत करिे का यह प्रयास ही सवोच्च ध्याि है।

सामान्यतया मिुष्य को दृिा, तथा ब्रह्माण्ड अथवा वसुतु-पदाथों के जगत् को उससे बाह्य समझा जाता है। यहााँ परम तत्त्व के इस ध्याि में, भगवाि् नशव अथवा रुद्र को समस्त सृनि में पररव्याप्त वैनश्वक सत्ता के रूप में वनणवत नकया गया है। जब चेतिा के प्रयास से नवचारक एवं नवचार, चेतिा एवं पदाथव, व्यनक्त एवं वसुतु के मध्य भेद को िि कर नदया जाता है, तब मािवीय चेतिा उस परम तत्त्व के गहि ध्याि द्वारा उसमें लीि हो जाती है, उससे एकरूप हो जाती है जो परम तत्त्व ि केवल ध्याि करिे वाली चेतिा है, अनपतु जो ध्याि का नवषय भी है।

एक प्रकार से यह सुतुनत पुरुष सूक्त, नवश्वकमाव सूक्त, नहरण्यगभव सूक्त, अथववेद के वरुण सूक्त तथा वेदों ◌ंके इस प्रकार के अन्य सूक्तों ◌ं के समिा है क्योंनक ये सभी परम तत्त्व को ि केवल दाशवनिक एवं आध्यान्दत्मक अनपतु सामानजक एवं ◌िैनतक रूप से नवपरीत तत्त्वों ◌ंके सन्दिश्रण के रूप में नचनत्रत करते हैं तानक वही व्यन्दक्त जो मिाव-नवचार की सीमाओं ◌ंसे ऊपर उि चुका है, इस प्रकार की सुतुनत-प्राथविा कर सके। एक महामिाव के अनतररक्त अन्य कोई भगविा् की इस प्रकार सुतुनत ◌िहीं ◌ंकर सकता है। मैं यह अिुभव करता हाँ नक यह एक सामान्य मिुष्य द्वारा की गयी भगवद्-सुतुनत ◌ि हीं ◌ंहै अनपतु एक महामिाव का सववशन्दक्तमिा् प्रभु के प्रनत पूणव समपवण है। यह सुतुनत जीवि की समस्त कनििाइयों ◌ंएवं दु:खों ◌ंके नवरुि एक महिा् रिाकवच है।

इस रुि-अध्याय, इस शतरुिी का नित्य वाचि एवं श्रवण नकया जािा चानहए तथा इसे अपिी दैनिक प्राथविा का अंग बििा चानहए। इससे व्यन्दक्त के पापों ◌ंका ◌िाश होता है, उसके भीतर आध्यान्दत्मक प्रकाश दीप्त होता है तथा व्यन्दक्त अपिे आन्तररक मािनसक चिुओं ◌ंसे उस परम तत्त्व का, बाहर ब्रह्माण्ड के रूप में तथा भीतर मि एवं चेतिा के रूप में दशवि करता है। इस प्रकार यह एक वैनश्वक ध्यिा है, जो वेदों ◌ंमें 'एकमेव अनद्वतीय परम पुरुष' की भगविा् नशव-रुि की सुतुनत के रूप में वनणवत नकया गया है। उि परम पुरुष का अिुग्रह हम सब पर हो।

पुरुष सूक्त की मनहमा

वेदोक्त पुरुष सूक्त' महि् ऋनष िारायण द्वारा सृनि के नवनवि रूपों ंमें अनभव्यक्त वैनश्वक नदव्य सत्ता के दशवि पर आिाररत एक सवावनिक प्रभावशाली सुतुनत मात्र ही िहीं ंहै, अनपतु यह एक सत्यान्वेषक को पराचेतिा अथावत् समानि अवस्था में प्रवेश करिे का एक लघुमागव भी है। यह सूक्त पााँच प्रकार की शन्दक्तयों ंसे आपूररत है जो सािक को भगवदीय अिुभव प्रदाि करिे में सिम हैं। प्रथमतः, इस सूक्त के िााि महामुिीन्द्र िारायण हैं नजन्हें श्रीमद्भागवत में एकमात्र ऐसा पुरुष बताया गया है नजिके नचत्त को इच्छाएाँ नवचुब्ध िहीं ंकर सकती हैं तथा महाभारत के अिुसार नजिकी असीम शन्दक्त की कल्पिा समस्त देवता भी िहीं ंकर सकते हैं। इस प्रकार के यह महि् ऋनष हैं नजिके समि यह सूक्त प्रकट हुआ तथा नजन्होंिे इसे परम पुरुष की सुतुनत के रूप में अनभव्यक्त नकया। नद्वतीयतः, सूक्त के मन्त् एक नवनशि छन्द में आबि नकये गये हैं जो सूक्त-वाचि के समय नवशेष आध्यान्दत्मक शन्दक्त उत्पन्न करिे में अपिा सहयोग देता है। तृतीयतः, मन्त्ोच्चारण की स्वर-प्रणाली (Intonation) मन्त्ों ंके निनहताथव को अनभव्यक्त करिे में सहायता देती है, इस स्वर-प्रणाली में थोडी सी तुरुनट एक नभन्न प्रभाव उत्पन्न कर सकती है। चतुथवतः, इस सुतुनत में वन्दन्दत देवता देश-काल में अनभव्यक्त कोई बाह्य सत्ता िहीं ंहै, अनपतु वह देश-काल से परे वैनश्वक सत्ता है जो हमारे अिुभव का अनवभाज्य अत्यावश्यक सारत्तत्त्व है। पंचमतः, यह सूक्त परम पुरुष की वैनश्वक अविारणा के अनतररक्त, इस अिुभव की आन्तररकता को भी सूनचत करता है तथा इस प्रकार इसे नकसी भी बाह्य वसुतु के बोि से पृथक करता है।

सूक्त इस कथि के साथ प्रारम्भ होता है नक सृनि में समस्त नसर, आाँखें तथा पैर परम पुरुष के हैं। यहीं ं यह आश्चयवजिक सत्य निनहत है नक हम नवनभन्न वसुतु-पदाथव, शरीर, व्यन्दक्त, रूप-रंग इत्यानद िहीं ंदेखते हैं अथवा नवनभन्न ध्वनियााँ िहीं ंसुिते हैं, अनपतु एकमेव अनद्वतीय पुरुष के नवनभन्न अंगों ंको ही देखते हैं। नजस प्रकार हम एक व्यन्दक्त के हाथ, पैर, िाक अथवा काि को उसके नवनभन्न अंगों ंके रूप में देखते हुए भी ऐसा िहीं ंसोचते हैं नक हम नवनभन्न वसुतुओं ंको देख रहे हैं, अनपतु हम यह सोचते हैं नक हमारे सिुख यह एक व्यन्दक्त है; उसके शरीर के नवनभन्न अंगों ंके प्रनत हम पृथक् पृथक् भाव िहीं ंरखते हैं; क्ोंनक यहााँ हमारी चेतिा उसके नवनभन्न अंगों ंके होते हुए भी उसे एक समूपूणव व्यन्दक्त के रूप में ग्रहण कर रही है। उसी प्रकार हमें इस सृनि को भी नवनभन्न वसुतुओं ंएवं व्यन्दक्तयों ंके नमश्रण के रूप में िहीं ंदेखिा है नजिके प्रनत हमें नवनभन्न दृनिकोण एवं व्यवहार रखिा है, अनपतु हम सृनि को एक वैनश्वक पुरुष के रूप में देखिा है जो हमारे समि उज्ज्वल रूप से प्रकाशमाि है तथा जो समस्त िेत्रों ंसे हमें देखते हैं समस्त नसरों ंसे सहमनत व्यक्त करते हैं, समस्त होंठों ंसे मुस्कराते तथा समस्त नजह्वाओं ंसे बोलते हैं। यह पुरुष सूक्त के परम पुरुष है ऋनष िारायण द्वारा इि सववेश्वर की मनहमा का गाि नकया गया है। य नकसी मिव के भगवाि् िहीं ंहैं तथा ि ही अिेक देवताओं ंमें से एक दे हैं। केवल यही भगवाि् हैं जो सम्भवतया सववत्र-सववदा हो सकते हैं।

जब सृनि को इस प्रकार भगवद्रूप देखिे हेतु हमारी नवचार-प्रनक्रया का नवस्तार नकया जाता है तथा प्रनशनित नकया जाता है, तब इसे गहरा आघात पहुाँचता है; क्ोंनक इस प्रकार नवचार करिे से हमारी समस्त इच्छाओं–कामिाओं ंका मूलोच्छेदि हो जाता है; जब समूपूणव सृनि एक वैनश्वक पुरुष ही है तो नकसी भी इच्छा-कामिा की सम्भाविा कहााँ रह जाती है? मिव-मि का भ्रम तथा अज्ञाि, नजसके कारण वह जगत् के भौनतक पदाथों अथवा नकसी मािनसक या सामानजक न्दस्थनत की इच्छा करता है, पुरुष सूक्त के इस अत्यन्त सरल परन्तु क्रान्दन्तकारी नवचार द्वारा तत्काल िि हो जाता है। हम अपिे समि एक सत् तत्त्व को ही देखते हैं, बहुरूपता अथवा नवनविता को िहीं ंनजसकी इच्छा अथवा त्याग नकया जाये।

परनुतु इससे भी अनिक गहरा आघात तब प्राप्त होता है जब एक बुन्दिमा्-नववेकवा् नवचारक इसके वास्तनवक अनभप्राय को समझता है नक वह स्वयं इि परम पुरुष का एक नसर अथवा अंग है। इस न्दस्थनत में व्यन्दक्त को उसी प्रकार नवचार करिा होगा नजस प्रकार परम पुरुष नवचार करते हैं क्ोंनक अन्य प्रकार से नवचार करिा सम्भव िहीं ंहै। यह एक ही समय पर समस्त व्यन्दक्तयों ंएवं वसुतुओं ंके रूप में नवचार करिा होगा, वसुतुतः तब यह
मिावीय नवचार अथवा जीवि िहीं ंरह जायेगा। नजस प्रकार हम अपिे मन्दस्तष्क की मात्र एक कोनशका से नवचार िहीं ंकरते हैं, अनपतु अपिे समूपूणव मन्दस्तष्क द्वारा नवचार करते हैं, उसी प्रकार एक नवचारकताव, जो परम पुरुष के 'वैनश्वक नचन्ति केन्द्र' का एक भाग है नजसका केन्द्र सववत्र है परनुतु पररनि कहीं ंिहीं ंहै, वह एक जीव के रूप में अथवा व्यन्दक्तगत काल्पनिक केन्द्र के रूप में नवचार कर ही िहीं ंसकता है **न अन्य पन्था शवद्यते** - अन्य मागव िहीं ं
है। यह अनतमािनसक अथवा मिाती नचन्ति है। यह नदव्य ध्यिा है। यह वही यज्ञ है जो सूक्तािुसार सृनि है प्रारम्भ में देवताओं ंिे सम्पन्न नकया
पुरुष सूक्त का अनभप्राय मात्र इतिा िहीं ंहै। एक सिाक के नल यह इससे अनिक महत्त्वपूणव है।
उपरोक्त वणवि से हमें यह अिुनचत िारणा िहीं ंबिािी चानहए नक हम भगवा् को उसी प्रकार देख सकत हैं नजस प्रकार हम एक गाय को देखते हैं यद्यनप यह सत्य है नक सब कुछ वह परम पुरुष ही है। हमें यह स्मरण रखिा चानहए नक परम पुरुष 'दृिा' हैं, दृश्य िहीं।ं इसे सरलता से समझा जा सकता है नक जब सब कुछ परम पुरुष ही हैं अथावत् दृिा ही है, तो दृश्य वसुतु कहााँ होगी? दृश्यमा् वसुतुएाँ भी वास्तव में 'दृिा' पुरुष ही हैं। इस प्रकार यहााँ केवल 'दृिा' ही है जो नबिा दृश्य वसुतु के स्वयं को ही देख रहा है।

यहााँ भी दृिा के स्वयं को देखिे का अनभप्राय देश-काल में नवद्यमाि नकसी वसुतु को देखिे के समाि िहीं ं समझा जािा चानहए क्ोंनक इसे हम नफर एक 'दृश्य वसुतु' के रूप में मिा लेंगे। यहााँ दृिा िेत्रों ंके द्वारा स्वयं को िहीं ंदेख रहा है अनपतु वह अपिी चेतिा में स्वय का अिुभव कर रहा है। यह एक वैनश्वक सत्ता में समस्त वसुतु-पदाथों का लीि हो जािा है। इस प्रकार की सवावनिक सरल अविारणा के साथ, परम पुरुष का ध्यिा करिे से मिुष्य एक िण में भगवा् का सािात्कार कर लेता है।

िारायण सूक्त की महत्ता

िारायण सूक्त एक प्रकार से पुरुष सूक्त का ही रहस्यपूणव पररनशि है; इि दोिों ंसूक्तों ंमें उन्दल्लन्दखत उपास्य देव के स्वरूप में कुछ अन्तर मात्र है। पुरुष सूक्त परम पुरुष को 'सववव्यापक-एवं अवैयन्दक्तक सत्ता' के रूप में वणवत करता है और िारायण सूक्त 'िारायण' िाम से उिका स्तवि करता है। इस प्रकार पुरुष सूक्त उि परम पुरुष की सुतुनत है जो सृनि से परे हैं तथा साथ-ही-साथ सृनि के कण-कण में भी नवद्यमाि हैं, और िारायण सूक्त सृनि के रचनयता के प्रनत हृदयस्पशी एवं भन्दक्तभावपूणव सम्बोिि एवं सुतुनत है। िा रायण सूक्त में पुरुष सूक्त के गूढ़ाथव का कुछ स्पिीकरण भी प्राप्त होता है।

भगवा् िारायण सहस्र नसरों,ं सहस्र िेत्रों ंएवं सहस्र अंगों ंसे युक्त हैं। वे सृनि से परे नवद्यमाि सृनिकताव मात्र िहीं ंहैं अनपतु वे प्रत्येक प्राणी के हृदय में भी नवराजमाि हैं। गहि ध्यिा में व्यन्दक्त अपिे हृदय में 'अनिनशखा' अथावत् एक दीन्दप्तमन्त ज्योनत के रूप में उिका दशवि कर सकता है। मिुष्य के हृदय-कमल में ब्रह्माण्ड के रचनयता का नदव्य मन्दन्दर है। इस प्रकार परम पुरुष िारायण के उपासक को उिके दशवि एवं वन्दि हेतु कहीं ं और जािे की आवश्यकता िहीं ंहै, वह अपिे हृदय में ही उिका दशवि कर सकता है। भगवा् िारायण बाह्य जगत् की रचिा करते हैं तथा वे ही भीतर से भाव-नवचार को प्रेररत करते हैं। प्राणी की प्रत्येक िाडी में जीवि

प्रवानहत एवं स्पन्दन्दत होता है। यह प्रते्येक स्पन्दि, जीवि का यह प्रवाह भगवाि् ाारायण का ही चैतन्य स्वरूप है। इस सूक्त में भगवाि् ाारायण की उस एकमेव अनद्वतीय अनविाशी स्वयमू्भू सत्ता के रूप में सु्तुनत की गयी है जो ब्रह्मा, नवषु्णु, नशव, इन्द्र तथा समस्त देवताओं ंसे परे है तथा जो स्वयं ही इि सबके रूप में प्रकट हुए हैं। **यच्च शकिंशित् जगत् सववम्** - इस जगत् में जं कुछ भी नदखायी देता है अथवा सुाायी देता है; भगवाि् ाारायण ह उि सबके भीतर एवं बाहर उन्ें पररपूणव रूप से आवृत्त नकये हुए नवराजमाि हैं। भगवाि् ाारायण के आशीवावद एवं अिुग्रह हम सब पर हों।ं

श्री सूक्त की मनहमा

श्री सूक्त का पाि सुख-शान्दन्त, धि-धान्य एवं सववसमृन्दि की प्रान्दप्त हेतु देवी लक्ष्मी की नवनिवत् पूजा सनहत नवशेषतया शुक्रवार को नकया जाता है। भगवाि् नवषु्णु अथवा ाारायण की सहिनमवणी देवी लक्ष्मी, भगवाि् के नदव्य वैभव एवं मनहमा की प्रतीक हैं। वसु्तुतः भगवाि् ाारायण एवं देवी लक्ष्मी सत् तत्त्व (Being) एवं उसका नक्रयात्मक स्वरूप (Becoming) हैं। सत्ा, सृनि की नवनविता में, वैभवपूणव रूप में स्वयं को ही प्रकट करता है।

प्रायः आध्यान्दत्मक साधक यह भूल की गलती करते हैं नक भगवाि् जगत् से बाहर हैं तथा अतः आध्यान्दत्मक साधना हेतु जगत् को अस्वीकार करिा चानहए। यह उनचत दृनिकोण िहीं ंहै क्ोंनक यह संसार तो भगवाि् का वैभव है; नजस प्रकार प्रकाश सूयव का वैभव है और उसे सूयव से पृथक् िहीं ंनकया जा सकता है, उसी प्रकार भगवद्-प्ेरम के नलए इस नवशाल सृनि के सौन्दयव एवं वैभव को भगवाि् से पृथक् िहीं ंनकया जा सकता है।

ाारायण, भगवाि् हैं तथा देवी लक्ष्मी उिके ऐश्वयव, वैभव एवं मनहमा की प्रतीक हैं। वैष्णव सम्प्रदाय के अिुयायी ऐसा मािते हैं नक देवी लक्ष्मी के माध्यम से ही भगवाि् ाारायण की प्रान्दप्त हो सकती है। इसी प्रकार कुछ भक्त मािते हैं नक देवी राधा अथवा रुन्दिणी के माध्यम से ही भगवाि् कृष्ण की प्रान्दप्त सम्भव है। इसका अनभप्राय यह है नक साकार तत्त्व के माध्यम से, परम निराकार तत्त्व तक पहुँचा जा सकता है; दृश्य-तत्त्व के माध्यम से ही, अदृश्य तत्त्व से सम्पकव नकया जा सकता है। दृश्यों-अिुभवों ंके इस जगत् में साधक, भक्त अथवा ध्यािकताव स्वयं भी सन्दिनलत है। केवल एक अनत-उत्साही भक्त यह कल्पिा कर सकता है नक वह स्वयं इस जगत् से बाहर है तथा पररणामस्वरूप वह भौनतक जीवि के मूल्ों ंएवं महत्त्व को अस्वीकार कर देता है; ऐसा करते हुए वह यह भूल जाता है नक इस प्रकार की अस्वीकृनत द्वारा उसिे स्वयं को अस्वीकार कर नदया है क्ोंनक वह भी इस भौनतक

जगत् का, इस सृनि का ही एक भाग है। भगवि् को लोकातीत परात्पर सत्ता मिाते हुए भन्दक्तभाव अव्यावहाररक है, क्ोंनक भगवि् केवल लोकातीत सत्ता िहीं, ं अनपतु वे सृनि के कण-कण में व्याप्त सत्ता भी हैं।

शास्त्रों ंमें वनणवत चार पुरुषाथव 'िमव, अथव, काम एवं मोि' अत्यन्त बुन्दिमत्तापूववक एक समग्र जीवि के नसिान्त को प्रस्तुत करते हैं तानक हम केवल अपिे शरीर, मि एवं आत्मा के स्तर पर ही िहीं ंअनपतु बाह्य सृनि की प्रत्येक चर-अचर वस्तु के अिुरूप भी स्वयं को समायोनजत कर सकें। श्री सूक्त में देवी लक्ष्मी की स्तुनत वस्तुतः इस अवणविीय सृनि के रूप में अनभव्यक्त भगवि् के वैभव एवं शोभा के माध्यम से, स्वयं उि भगवि् की ही वन्दिा है। देवी लक्ष्मी समृन्दि की प्रतीक हैं तथा जीवि की प्रत्येक प्रकार की सम्पदा, समृन्दि ही कही जाती है। सम्पदा से अनभप्राय केवल िि, सोिा, चााँदी आनद िहीं ंहै। समस्त प्रकार का सुख, नवपुलता, प्राचुयव तथा तृन्दप्त भी देवी लक्ष्मी का स्वरूप है। नकसी भी प्रकार की भव्यता, मनहमा एवं श्रेष्ठता भी देवी लक्ष्मी के प्रतीक हैं। जब ये भगवि् के ही प्रतीक हैं, तो इन्ें अवांछिीय कौि कह सकता है? क्ा भगवि् श्री कृष्ण िे स्वयं श्रीमद्भगवद्गीता में िहीं ंकहा है नक इस जगत् में जो भी अत्यन्त मनहमायुक्त, ऐश्वयवयुक्त, श्रेष्ठतम वस्तु है, वह उिकी ही नदव्य नवभूनत है? वास्तव में, जगत् में ऐसा कुछ िहीं ंहै जो अस्वीकरणीय है। हमें यह भी ध्याि रखिा चानहए नक ध्याि अथवा योग सािि, यथाथव वस्तुओं ंको अस्वीकार करिा िहीं ंअनपतु समग्र अन्दस्तत्व को स्वयं में समानहत करिा है; यह हमारे एवं इस नवशाल सृनि के मध्य एकत्व की स्थापिा करिा है। इससे सृनि का वैभव भगवद्-साक्षात्कार प्रान्दप्त के मागव में बािा िहीं ंबिता होता है अनपतु यह भगवि् के सौन्दयव, ऐश्वयव एवं मनहमा का सूचक बि जाता है। नजस प्रकार सूयव की नकरण हमें यह बताती है नक सूयव क्ा है, उसी प्रकार यह जगत्, हमें भगवि् के नवषय में बताता है। प्रकृनत एवं पुरुष दो पृथक् तत्त्व िहीं ंहैं। जगत् एवं ईश्वर अपृथक्करणीय हैं।

नवष्णु पुराण के अिुसार भगवि् िारायण और देवी लक्ष्मी, अनि एवं उष्णता, पुष्प एवं सुगन्ध, तेल एवं न्दिग्धता, जल एवं तरलता तथा सूयव एवं प्रकाश के समाि हैं। इि नवनभन्न तुलिाओं ंके माध्यम से यह स्पि नकया गया है नक ये दोिों ंवास्तव में एक ही तत्त्व हैं; तथा ध्याि-उपासिा हेतु ही इस एक तत्त्व को दो रूपों ंमें पररकन्दल्पत नकया गया है। श्री सूक्त भगवि् के सृनि-वैभव की स्तुनत, उिके ऐश्वयव की स्तुनत, उिकी सवोच्च सत्ता की स्तुनत के रूप में, स्वयं उिकी ही स्तुनत है। मिुष्य की िानमवक भाविाओं ंकी यह नवनशि प्रवृनत्त होती है नक ये जगत् को एक 'बुराई' मािती हैं तथा भगवि् को जगत् से परे अथावत् एक लोकातीत लक्ष्य मािती हैं। यह प्रवृनत्त आध्यान्दत्मक पथ को अत्यनिक महत्त्व तथा जगत् को न्यूितम महत्त्व देती है। हमें इसके नवपरीत भी िहीं ंजािा है अथावत् जगत् को अत्यनिक महत्त्व तथा लोकातीत तत्त्व को न्यूितम महत्त्व देिा भी उनचत िहीं ंहै। सत्य का पथ 'स्वनणवम मध्यम' का पथ है। हम सब देवी लक्ष्मी के रूप में अनभव्यक्त, भगवि् के इस नदव्य वैभव के प्रनत नविम्रतापूववक समपवण करें तथा इसके माध्यम से शाश्वत प्राचुयव, शाश्वत सम्पदा 'भगवि् िारायण' को प्राप्त करें।

शवषय-सूिी

अथ शतरुनियम्

ॐ नमसे्ते रुद्र मन्यव उतोत इषवे नमः ।
नमसे्ते असुतु धन्वने बाहुभ्यामुत ते नमः ।।

हे भगवाि् रुि! आपको श्रिापूववक बारम्बार प्रणाम; (िुिों ंका संहार करिे वाले) आपके क्रोि एवं आपके बाण को प्रणाम; आपके ििुष एवं आपकी शन्दक्तशाली भुजाओं ंको पुिः-पुिः िमि।

ध्यातव्य (Note) - सुनवख्यात आचायव सायण के अिुसार यजुवेद के रुिाध्याय में वे मन्त् संनहताबि नकये गये नजिके द्वारा ज्ञाि-यज्ञ में आहुनत अनपवत की जाती है; इस ज्ञाि-यज्ञ में नवनवितापूणव अन्दखल सृनि की, परम पुरुष के नवराट्-व्यापक स्वरूप के रूप में अविारणा की गयी है।

या त इषुः शशवतमा शशविं बभूव ते धनुः ।
शशवा शरव्यायातव तया नोरुद्र मृडय । ।

यह आपका बाण (भक्तों ंके प्रनत) अत्यनिक शान्त-सौम्य हो गया है; आपका तूणीर (तरकश) एवं ििुष शुभ तथा मंगलप्रदायक हो गये हैं; हे परम पराक्रमी (रुि)! इिकै द्वारा हमें प्रसन्नता प्रदाि कररए।

ध्यातव्य (Note):
प्रथम मन्त् में िुि-संहार हेतु भगवाि् के रौि स्वरूप का वन्दि नकया गया है और दूसरे मन्त् में शान्दन्त की स्थापिा के पश्चात्, अस्त्र-शस्त्र का उद्देश्य पूणव होिे पर उिकै शुभप्रदायक कल्याणकारी स्वरूप की सुतुनत की गयी है।

या ते रुद्र शशवा तनूरघोराऽपापकाशशनी ।
तया नस्तनुवा शन्तमया शगररशिंताशभिाकशीशह ।।

हे कैलाश पववत से शान्दन्त की रन्दियों ंको नवकीणव करिे वाले भगवाि् रुि! हमें अपिे सकल-पापिाशक, शान्त एवं सौम्य स्वरूप में दशवि दीनजए।

ध्यातव्य (Note) -
भगवाि् रुि-नशव के दो स्वरूप हैं-रौि एवं सौम्य; ये नभन्न-नभन्न समय एवं पररन्दस्थनत में प्रकट होते हैं।

याशमषु शगररशिंत हसे्ते शबभर्म्वस्तवे ।
शशविां शगररत्र तिां कुरु मा शहँिं सीः पुरुषिं जगत् ।।

हे कैलाशनिवासी सववमंगलप्रदाता प्रभु! नजस बाण का आप शतुरुओं ंपर सन्धाि करते हैं, हम भक्तों ंके नलए उसे कल्याणकारी बिाइए। हे पावि पववत पर वास करिे वाले सववरिक! सृनि के नकसी भी प्राणी को कोई कि अथवा हानि ि हो।

शशवेन विसा त्वा शगररशाच्छावदामशस ।
यथा नः सववशमज्जगदयक्ष सुमना असत् ।।

हे नगरीश ! हम आपकी प्रान्दप्त हेतु पावि-सुतुनतयों ◌ंद्वारा आपकी वन्दिा-आराििा करते हैं। आप ऐसी
कृपा कीनजए नक हमारा यह समस्त जगत् सभी प्रकार के रोगों ◌ंएवं किों ◌ंसे मुक्त हो तथा निमवल एवं प्रसन्नमिा
प्रानणयों ◌ंसे युक्त हो।

अध्यविोदशधवक्ता प्रथमो दैव्यो शभषक् ।
अही ि◌ँश्च सवावञ्जभयन्त्सवावश्च यातुधान्यः ।।

आनद देव, नदव्य नचनकत्सक, भगवाि् रुि मुझे जगत् के समस्त किों ◌ंयथा नवषैले प्राणी, वन्य पशु, आसुरी शन्दक्तयों ◌ंसे अभय प्रदाि करके स्वयं के परात्पर स्वरूप में लीि करें।

असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः ।
ये िेमा ◌ॅ् रुद्रा अशभतो शदक्षु शश्रताः
सहस्रशोऽवैषा हेड ईमहे ।।

सूयव के रूप में भगवाि् रुि (निनतज से उदय होिे की नवनवि अवस्थाओं ◌ंमें) ताम्र वणव, अरुण वणव, बभ्रु वणव तथा अन्य नवनवि वणों से युक्त हैं, (अन्धकार-िाशक होिे के कारण) सुमङ्गल स्वरूप हैं, वे समस्त नदशाओं ◌ंको आवृत्त करती हुई सहस्रशः उज्ज्वल रन्दियों ◌ंके रूप में प्रकनटत हैं; हम श्रिापूववक प्रनणपात द्वारा इि रन्दियों ◌ं
की उग्रता को शनमत करते हैं।

असौ योऽवसपवशत नीलग्रीवो शवलोशहतः ।
उतैनं गोपा अदृशन्नदृशन्नुदहायवः ।।
उतैनं शवश्वाभूताशन स दृष्टो मृडयाशत नः ।

जो (नवषपाि के कारण) िीलकण्ठ हैं, लोनहतवणी (लाल रंग के) हैं, जो (सूयव के रूप में) गगि में नवचरण करते हैं, अनशनित गोप-बालक तथा जल ले जाती हुई ग्रामबालाएँ नजिका दशवि करते हैं, जगत् के समस्त प्राणी (उच्च एवं निम्न कोनट दोिों)◌ं नजिका दशवि करते हैं, वे भगवाि् रुि हमें आिन्द प्रदाि करें।

ध्यातव्य (Note) - इस मन्त्र का अनभप्राय यह है नक कैलाश पववत पर नवराजमाि प्रभु के दशवि केवल उन्हीं ◌ंमिुष्यों ◌ंको हो सकते हैं नजन्होंिे उच्चतम आध्यान्दत्मक उपलन्दब्ध प्राप्त की है, परन्तु सूयव के रूप में उिके दशवि प्रत्येक मिुष्य को सुलभ हैं। अपिी असीम करुणा के कारण, वे दयामय प्रभु स्वयं को हमारी इन्दन्द्रयों ◌ंके अिुभव का नवषय बिाते हैं।

नमो अस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अथो ये अस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरन्नमः ।।

भगवाि् रुि को बारम्बार प्रणाम जो िीलग्रीवा (िीलकण्ठ) हैं, जो (इन्द्र के रूप में) सहस्र िेत्रों ◌ंवाले हैं तथा जल-वृनि करते हैं; उिके सेवक वृन्द को भी मेरा पुिः-पुिः िमि।

प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोराशलवयोर्ज्यावम् ।
याश्चते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ।।

हे भगवि्! आप अपिे िि्ुष की प्रत्यञ्चा को खोल दीनजए नक तथा आपके हाथ में जो बाण हैं, उन्हें भी िीचे रख दीनजए है (क्ोंनक अब शत्रुु का िाश हो गया है)।

ध्यातव्य (Note) - संस्कृत भाषा में सववशन्दक्तमाि् प्रभु के नलए 'भगवाि्' शब्द का प्रयोग नकया जाता है। 'भगवाि्' शब्द का अथव है जो समस्त ऐश्वयव, वीयव, यश, श्री, ज्ञाि एवं वैराग्य से सम्पन्न हैं।

अवतत्य धनुस्त्व सहस्राक्ष शतेषुधे ।
शनशीयव शल्यानिां मुखा शशवो नः सुमना भव ।।

हे सहस्राि एवं (युि-काल में) शत-तूणीरिारी भगवि्! (आपके उद्देश्य की पूनतव हो जािे के पश्चात्) अपिे िि्ुष को िीचे रखकर तथा अपिे तीक्ष्ण बाणों ्के अग्रभाग को तोडकर, हमारे प्रनत सौम्य एवं मंगलप्रदायक स्वरूप िारण कररए।

शवज्यिं धनुः कपशदवनो शवशल्यो बाणवा उत ।
अनेशन्नस्येषव आभुरस्य शनषङ्गशथः ।।

भगवाि् कपनदवि् (नशव) का िि्ुष प्रत्यञ्चा से मुक्त हो; उिका तूणीर तीक्ष्ण बाणों ्के अग्रभाग से रनहत हो; उिके बाण भेदिे में (आहत करिे में) असमथव हों ्तथा उिका िि्ुष बाणों ्के सन्धाि का माध्यम िहीं ्अनपतु केवल उि बाणों ्का आश्रय बिे।

ध्यातव्य (Note): यह मन्त्र तथा अन्य मन्त्र, नजिमें भगवाि् रुि से उिके अस्त्र-शस्त्र िीचे रखिे की प्राथविा की गयी है, उिके सौम्य स्वरूप का आह्वाि करते हैं। जब भगवाि् रुि अपिे भयंकर अस्त्र-शस्त्रों ्द्वारा संहार-कायव में संलि िहीं ्होते हैं, उस समय उिका सौम्य स्वरूप प्रकट होता है।

या ते हेशतमीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ।
तयाऽस्मान्वन्वश्वतस्त्वमयक्ष्मया पररबुभुज ।।

हे समस्त समृन्दि के नवपुल स्रोत ! अपिे हाथ में िारण नकये हुए इस िि्ुष एवं अन्य अस्त्रों ्(खड्ग आनद) से हमारी सब ओर से रिा कररए; क्ोंनक अब आपके इि अस्त्र-शस्त्र द्वारा संहार-कायव पूणव हो चुका है।

नमस्ते अस्त्वायुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यिां तव धन्वने ।।

हे प्रभु! आपके उस बाण को प्रणाम नजसका िि्ुष पर सन्धाि िहीं ्नकया गया है परन्तु जो शत्रुु के नविाश में समथव है। आपके िि्ुष और आपकी भुजाओं ्को पुिः-पुिः प्रणाम।

परर ते धन्वनो हेशतरस्मानृवणक्तु शवश्वतः।
अथो य इषुशधस्तवारे अस्मशन्नधेशह तम् ।।

हे प्रभु! आपके िं्ुष से सन्धिा नकये गये तीक्ष्ण बाण हमारा त्याग करें अथावत् हमें ि मारें तथा आपके तूणीर को भी आप हमसे दूर रन्दखए (और हमारी रिा कररए)।

ध्यातव्य (Note) - एक अन्य व्याख्या के अिुसार इस मन्त् की दूसरी पंन्दक्त का यह अनभप्राय है, "आपके इस तूणीर का हमारे शत्रुओं ंके िाश हेतु प्रयोग कररए।"

ॐ नमसे्ते असुतु भगवन्
शवश्ेवेश्वराय महादेवाय
त्र्यम्बकाय शत्रपुरान्तकाय
शत्रकालाशिकालाय कालाशिरुद्राय
नीलकण्ठाय मृतुयुिंजयाय
सवेश्वराय शिंकराय
सदाशशवाय श्रीमन्महादेवाय नमः ।।

हे नवश्ेवेश्वर, महादेव, नत्रित्रारी, नत्रपुरसंहारक, नत्रलोक की संहारकारक अनि के नलए मृतुयु-स्वरूप, काल-रूपी अनि के नलए अत्यन्त भयप्रद, िीलकण्ठ, मृतुयुञ्जय, सवेश्वर, सववशुभप्रदायक, सदानशव प्रभु आपको पुिः-पुिः प्रणाम।

नमो शहरण्यबाहवे सेनान्ेये शदशिां ि पतये नमो
नमो वृक्ेष्येभ्यो हररकेशेभ्यः पशूनिां पतये नमो
नमः सन्विञ्जराय न्वत्वषीमते पथीनिां पतये नमः ।।

नहरण्यबाहु (स्वणवणी भुजाओं ंवाले), समस्त सिाओं ंके महािायक, समस्त नदशाओं ंके स्वामी भगवाि् रुि को प्रणाम। सृनि के समस्त प्रानणयों ंके पालिकताव, हररत वृिों ंके स्रोत एवं सारतत्त्व आपको पुिः-पुिः प्रणाम। स्वयं प्रकाशमाि एवं (इस जगत् से प्रयाण करिे के नवनभन्न पथ) नवनवि पथों ंके स्वामी आपको बारम्बार िमि।

ध्यातव्य (Note) - रुि-अध्याय के प्रथम भाग में भगवाि् रुि-नशव के बाण एवं िं्ुष िारण करिे वाले रूप की शन्दक्त का वणवि नकया गया है। इसके उत्तरवती भागों ंमें सृनि के अणु-अणु में प्रकनटत उिके नदव्य वैभव का नचत्रण नकया गया है। इि सुतुनत-मन्त्ों ंमें समस्त वसुतु-पदाथों में नवद्यमाि परम पुरुष को श्रिापूववक बारम्बार वन्दिि-िमि नकया गया है। इसनलए इिमें प्रत्ेयेक पंन्दक्त में 'िमः' शब्द की पुिरावृनत्त हुई है; पंन्दक्त के प्रारम्भ एवं अन्त दोिों ंस्थािों ंमें 'िमः' का प्रयोग हुआ है। (अंग्रेजी अिुवाद में यह पुिरावृनत्त िहीं ंकी गयी है)

नमो बभ्लुशाय शवव्याशधनेऽन्नानिां पतये नमो
नमो हररकेशायोपवीशतने पुष्टानिां पतये नमो
नमो भवस्य हेत्ैयै जगतिां पतये नमः ।।

वृषभारूढ़, शत्रुओं ंका दमि करिे वाले तथा अन्न अथवा पदाथव के स्वामी भगवाि् रुि को प्रणाम। िील-वणव केश से युक्त, मंगलकारी-यज्ञोपवीतिारी, सद्गुणसम्पन्न मिुष्यों ंके स्वामी आपको िमि। भवपाश के िाशक एवं समस्त सृनि के अनिपनत आपको बारम्बार प्रणाम।

नमो रुद्रायाततताशवने क्षेत्राणिां पतये नमो
नमः सूतायाहन्त्याय वनानिां पतये नमो
नमः रोशहताय स्थपतये वृक्षाणिां पतये नमः ।।

अपिे ििुष द्वारा रिा करिे हेतु उद्यत, समस्त िेत्रों ं(मन्दन्दरों,ं शरीरों ंएवं समूपूणव सृनि) के स्वामी भगविा् रुि को पुिः-पुिः प्रणाम । अजेय एवं सारनथ-रूप रुि (समस्त जगत् के नदशा-निदेशक) आपको िमि; विस्पनत-जगत् के पालक आपको िमि। लोनहतवणी, विृों ंमें नवराजमाि, सववसंरिक आपको पुिः-पुिः प्रणाम।

नमो मन्विणे वाशणजाय कक्षाणिां पतये नमो
नमो भुविंतये वाररवसृकृतायौषधीनिां पतये नमो
नम उच्चैघोषायाक्रन्दयते पत्तीनिां पतये नमो
नमः कृत्स्नवीताय धावते सत्त्वनिां पतये नमः ।।

राजदरबार में स्वयं को मन्त्ी के रूप में, व्यापार में वनणक् के रूप tilde 7 अनभव्यक्त करिे वाले तथा विों ंमें लता-विृ आनद के पररपालक भगविा् रुि को पुिः-पुिः प्रणाम । सृनिकताव, समस्त सम्पदा के स्वामी, औषनियों ंके अनिपनत आपको िमि। युि में उग्र-शब्द द्वारा शत्रुओं ंको भयभीत करिे वाले, समस्त सेिाओं ंके सेिािायक, समूपूणव सृनि को पररव्याप्त करिे वाले, सूफ़ूनतवमाि कताव तथा शरणापन्न भक्तजिों ंके आश्रय आपको
बारम्बार िमि।

नमः सहमानाय शनव्याशधन आव्याशधनीनिां पतये नमो
नमः ककुभाय शनषशङ्गणे स्ेतेनानिां पतये नमः ।।

शत्रुओं ंका पराक्रमपूववक सामिा करिे वाले, शत्रु-सेिा के प्रबल संहारक तथा सब ओर से प्रहार करिे वाली सेिा (िमव के प्रनत निष्ठाविा् सेिा) के रिक भगविा् रुि को प्रणाम; वृषभ पर आरूढ़, खि्गिारी, चोरों ं(प्रत्येक प्राणी का हृदय हरण करिे वाले) के अनिपनत आपको पुिः-पुिः िमि।

ध्यातव्य (Note): 'स्ेतिािां पतये' अथावत् चोरों ंके अनिपनत शब्द परम पुरुष की सृनि के अणु-अणु में नवद्यमािता को इंनगत करता है।

नमो शनषशङ्गण इषुशधमते तस्कराणिां पतये नमो
नमो वञ्चते पररवश्ञ्चते स्तायूनिां पतये नमो
नमो शनिेरवे पररिरायारण्यानिां पतये नमः ।।

बाण एवं तूणीरिारी भगविा् रुि को प्रणाम; तस्करों ंके स्वामी आपको प्रणाम; छल-छद्म-युक्त आपको प्रणाम; िाकुओं ंके स्वामी आपको प्रणाम तथा विों,ं वीनथयों ंएवं गृहों ंमें नछपे चोरों ंके चतुर स्वामी आपको पुिः-पुिः प्रणाम।

ध्यातव्य (Note)- भगविा् की 'चोरों ंके अनिपनत' के रूप में वन्दिा करिे के दो अनभप्राय हैं। प्रथमतः, भगविा् ही चोरों ंकी भी अन्तवावसी सत्ता हैं, उिकी सत्ता के नबिा चोर–िाकुओं ंका जीवि असम्भव है। नद्वतीयतः, ईश्वर हिो के साथ-साथ, चोर के रूप में वे 'जीवात्मा' भी हैं। समूपूणव

ब्रह्माण्ड को भगवद्-स्वरूप मिाते हुए देखा जाये तो भगवाि् स्वयं ही उच्च–िीच, अच्े्छे-बुरे, पुण्यशील एवं पापशील व्यन्दक्त के रूप में लीला कर रहे हैं; परनुतु वैयन्दक्तकता की ािरणा में आबि, एक जीवात्मा के नलए यह समझिा कनिि होता है। परम सत्य में प्रनतनष्ठत ज्ञािीजिों ंका ही ऐसा दृनिकोण होता है। उस परम सत्ता में समस्त ैिनतक अविारणाएँ रूपान्तररत हो जाती हैं। ये वैनदक-मन्त् एक सािक को समूपूणव सृनि में भगवद्-दशवि करिे में सहायता प्रदाि करते हैं।

नमः सृकाशवभ्यो शजघा सद्‌भ्यो मुष्णतिां पतये नमो
नमोऽशसमद्‌भ्यो नक्तिंरिद्‌भ्यः प्रकृन्तानिां पतये नमो
नम उष्णीशषणे शगररिराय कुलुञ्चानिां पतये नमः।।

स्व-रिा में संलि पशुओं ंके स्वामी तथा मिुष्यों ंकी हत्या करिे को उद्यत चोरों ंके स्वामी भगवाि् रुि को प्रणाम; प्रानणयों ंपर घात कर उिके ि ि को चुरािे हेतु रानत्र में नवचरण करिे वाले खि्गिारी ािकुओं ंके अनिपनत आपको प्रणाम; नसर पर पगडी ािरण कर पववतों ंमें नवचरण करिे वाले तथा दूसरों ंके गृह, ेित्र आनद से उिकी वसुतुओं ंका छलपूववक हरण करिे वालों ंके पालक आपको पुिः-पुिः प्रणाम।

नम इषुमद्‌भ्यो धन्वाशवभ्यश्च वो नमो
नम आतन्वानेभ्यः प्रशतदधानेभ्यश्च वो नमो
नम आयच्छद्‌भ्यो शवसृजभ्यश्च वो नमो
नमोऽस्यद्‌भ्योशवद्ध्यद्भ्यश्चवो नमः।।

भगवाि् रुि को बारम्बार िमि जो बाण एवं ििुष ािरण करिे वालों ंके रूप में नवचरण करते हैं; जो ििुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ािे वाले मिुष्यों ंमें नवराजमाि हैं; जो ििुष को भली-भाँनत खीचंकर बाण चलािे वालों ंमें नवराजमाि हैं तथा जो बाण को सम्यक् रूप में चलाकर लक्ष्य-भेि करिे वाले व्यन्दक्तयों ंमें नवराजमाि हैं।

ध्यातव्य (Note) - महिि् आचायव सायण यहाँ एक संकेत देते हैं नक ये समस्त रूप भगवाि् रुि के ही हैं; इससे यह आश्चयवजिक सत्य उद्घानटत होता है नक भगवाि् केवल समस्त ािम-रूपों ंमें नवराजमाि ही िहीं ंहैं, अनपतु इस जगत् में जो कुछ है, वह सब स्वयं भगवाि् ही हैं।

नम आसीनेभ्यश्शयानेभ्यश्च वो नमो
नमः स्वपद्‌भ्यो जाग्रद्‌भ्यश्च वो नमो
नमन्वस्तष्ठद्‌भ्यो धावद्‌भ्यश्च वो नमो
नमः सभाभ्यः सभापशतभ्यश्च वो नमो
नमो अशे्वेभ्योऽश्वपशतभ्यश्च वो नमः ।।

बैिे हुए एवं नवश्राम करते हुए भगवाि् रुि को प्रणाम; स्वप्नावस्था एवं जाग्रतावस्था का अिुभव करिे वाले आपको प्रणाम; न्दस्थत रहिे वाले एवं वेगवाि् गनत वाले आपको प्रणाम; सभा-रूप एवं सभापनत-रूप आपको प्रणाम; अश्व-रूप एवं अश्वपनत-रूप भगवाि् रुि को पुिः-पुिः प्रणाम।

नम आव्याशधनीभ्यो शवशवध्यन्तीभ्यश्च वो नमो
नम उगणाभ्यसृ्तृ हतीभ्यश्च वो नमो
नमो गृते्सेभ्यो गृत्सपशतभ्यश्च वो नमो

नमो व्रातेभ्यो व्रातपशतभ्यश्च वो नमः ।।

सब प्रकार से प्रहार करिे वाली शन्दक्तयों ंके रूप में नवराजमाि भगवाि् रुद्र को िमि; सौम्य उच्च शन्दक्तयों ंतथा उग्र निम्न शन्दक्तयों ं के रूप में नवराजमाि आपको ि मि; इन्दन्द्रय सुखों ं के नलए लालानयत मिुष्यों ं तथा उिके अनिपनतयों ंके रूप में नवराजमाि आपको िमि; समस्त (चर-अचर) प्राणीसमूह एवं उिके अनिपनत स्वरूप आपको पुिः-पुिः िमि।

ध्यातव्य (Note) - मूल मन्त् में 'शन्दक्त' शब्द का प्रयोग िहीं ंहुआ है, परन्तु मन्त् में प्रयुक्त स्त्रीवाचक शब्दों ंकी महत्ता स्पि करिे हेतु अंग्रेजी अिुवाद में 'शन्दक्त' शब्द का प्रयोग नकया गया है। ये भगवाि् की नवनभन्न शन्दक्तयों ंको इंनगत करती हैं। आचायव सायण कहते हैं नक सौम्य शन्दक्तयााँ सप्तमातृकाएाँ है तथा उग्र शन्दक्तयााँ दुगावदेवी आनद हैं।

नमो गणेभ्यो गणपशतभ्यश्च वो नमो नमो
शवरूपेभ्यो शवश्वरूपेभ्यश्च वो नमो
नमो महद्भ्यः कुषुल्लकेभ्यश्च वो नमो
नमो रशथभ्योऽरथेभ्यश्च वो नमो
नमो रथेभ्यो रथपशतभ्यश्च वो नमः ।।

देवगण रूप एवं देवागणानिपनत रूप भगवाि् रुद्र को प्रणाम, रूपरनहत एवं नवश्वरूप आपको प्रणाम; उत्कृि प्राणी रूप एवं निकृि प्राणी रूप आपको प्रणाम; रथी रूप (रथ पर आरूढ़) एव रथनवहीि रूप आपको प्रणाम; रथ रूप एवं रथपनत रूप आपको बारम्बार प्रणाम।

नमः सेनाभ्यः सेनाशनभ्यश्च वो नमो
नमः क्षत्तृभ्यः सिंग्रहीतृभ्यश्च वो नमो
नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो
नमः कुलालेभ्यः कमररभ्यश्च वो नमो
नमः पुशञ्जष्टेभ्यो शनषादेभ्यश्च वो नमः ।।

सेिा रूप एवं सेिापनत रूप भगवाि् रुद्र को िमि; कुशल सारनथ रूप एवं रथचालि के िव-नशक्षाथी रूप आपको िमि, काष्ठकमी रूप एवं रथनिमावता रूप आपको िमि; कुम्भकार रूप एवं लौहकार रूप आपको िमि; पक्षी-आखेटक (बहेनलया) एवं निषाद (मछुआरा) रूप आपको पुिः-पुिः िमि।

नम इषुकृद्भ्यो धन्वकृद्भ्यश्च वो नमो
नमो मृगयुभ्यः श्वशनभ्यश्च वो नमो
नमः श्वभ्यः श्वपशतभ्यश्च वो नमः ।।

बाण एवं ििुष निमावता रूप भगवाि् रुद्र को प्रणाम; आखेटक एवं व्याि रूप आपको प्रणाम; श्वाि रूप एवं श्वािों ंके स्वामी रूप आपको प्रणाम।

नमो भवाय च रुद्राय च नमः शवावय च
पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शशशतकण्ठाय च

नमः कपशदवने ि वुयुप्तकेशाय ि नमः सहस्राक्षाय
िशितधन्वने ि ।।

सृनिकताव एवं संहारकताव भगवि् रुि को िमि; पापिाशक एवं सववप्राणीरिक आपको िमि; िीलकण्ठ एवं शुभ्रकण्ठ आपको िमि; जटािारी एवं मुन्दण्डत केश आपको िमि; सहस्र िेत्र युक्त एवं शतिि्ुष-िारी आपको पुिः-पुिः िमि।

ध्यातव्य (Note): आचायव सायण कहते हैं, "एक तपस्वी के रूप में भगवि् नशव जटािारी हैं; एक संन्यासी के रूप में वे मुन्दण्डतकेश हैं; इन्द्र के रूप में वे सहस्रिेत्र युक्त हैं तथ अपिे नवनवि रूपों ंमें वे असंख्य िि्ुष िारण करते हैं।"

नमो शगररशाय ि शशशपशवष्टाय ि नमो मीदुष्टमाय
िेषुमिते ि नमो हस्वाय ि वामनाय ि नमो बृहते
िविषीयसे ि नमो वृद्धाय ि सिंवृध्वने ि ।।

कैलाशपववतवासी (नशवरूप) भगवि् रुि को प्रणाम, समस्त प्रानणयों ंके अन्तवावसी (नवष्णुरूप) आपको िमि; बाण िारण करिे वाले तथा मेघों ंद्वारा अनतवृनि करिे वाले आपको िमि; हस्व अंगों ंवाले वामिरूप आपको िमि; नवनविाका अंगों ंयुक्त वृहत्काय आपको िमि; अिन्त काल से वन्दन्दत पुरातल पुरुष आपको बारम्बार प्रणाम।

नमो अशग्रयाय ि प्रथमाय ि नम आशवे
िाशिजराय ि नमः शीशियाय ि शीभ्याय ि
नम ऊत्यावय िावस्वन्याय ि नमः स्रोतस्याय ि
द्वीप्याय ि।

आनदभूत रूप एवं समस्त प्रानणयों ंके स्वामी भगवि् रुि क प्रणाम; सववव्यापक एवं सवावनिक सूफूनतवमिा आपको प्रणाम गनतशील एवं प्रवाहशील वसुतुओं ंमें नवद्यमिा आपको प्रणाम वेगवि् जलतरंगों ंएवं न्दस्थर जल में नवद्यमिा आपको प्रणाम िनदयों ंएवं द्वीपों ंमें व्याप्त आपको प्रणाम।

नमो जे्येष्ठाय ि कशनष्ठाय ि नमः पूववजाय
िापिरजाय ि नमो मध्यमाय िापगल्भाय ि
नमो जघन्याय ि बुशियाय ि नमः
सोभ्याय ि प्रशतसयावय ि ।।

जे्येष्ठतम एवं कनिष्ठतम प्राणी रूप भगवि् रुि को िमि; आनदपुरुष रूप एवं उससे उत्पन्न समस्त प्रजा-स्वरूप आपको िमि; सृनि के मध्यम भाग रूप (यथा देवता-गण आनद) एवं अबिो नशशु रूप आपको िमि; सृनि के अन्दन्तम रूप (पशु-पिी आनद) एवं शाखा-पल्लव युक्त पिौिें-वृिों ंरूप आपको िमि; नमनश्रत गुणों ंवाले (अथावत् सद्गुण-दुगुवण युक्त मिुष्य जानत) एवं समस्त चर-प्राणी स्वरूप आपको िमि।

नमो यार्म्याय ि **क्षेर्म्याय** ि **नम उववयावय** ि
खल्याय ि **नमः श्लोक्याय** िा**वसान्याय** ि **नमो**
वन्याय ि **कक्ष्याय** ि **नमः श्रवाय** ि
प्रशतश्रवाय ि ।।

यम के रूप में न्यायप्रदाता एवं मिोप्रदाता भगविा् रुि को प्रणाम; सवविान्यसम्पन्न हररतर्–रा के स्वामी एवं कृनषर्–ेत्र में नवराजमाि आपको प्रणाम; वेद (मन्त्रों)ं एवं उपनिषदों ं(उपनिषदों ंमें वनणवत उपासिाओं)ं में नवद्यमाि आपको प्रणाम; विों ंमें वृि-लतारूप आपको प्रणाम; ध्वनि एवं प्रनतध्वनि में नवद्यमाि आपको बारम्बार प्रणाम।

नम आशुषेणाय िा**शुरथाय** ि **नमः शूराय**
ाविशभन्दते ि **नमो वशमवणे** ि **वरूशथने** ि
नमो शबन्विने ि **कवशिने** ि **नमः शुरुताय** ि
शुरुतसेनाय ि ।।

शीघ्रगामी सेिा एवं शीघ्रगामी रथों ंमें नवद्यमाि भगविा् रुि को ििमि; परम शूरवीर एवं शतुरुसंहारक आपको ििमि; नशरस्त्राण एवं कवच िारण करिे वाले आपको ििमि; अत्यन्त सुप्रनसि (पुराति पुरुष) एवं सुप्रनसि सेिा युक्त आपको पुिः-पुिः ििमि।

नमो दुन्दुभ्याय िा**हनन्याय** ि **नमो धृष्णवे** ि
प्रमृशाय ि **नमो दूताय** ि **प्रशहताय** ि **नमो**
शनषशङ्गणे िे**षुशधमते** ि ।।

दुन्दुनभ एवं ढोल की ध्वनि में नवद्यमाि भगविा् रुि को ििमि; युि से पलायि ि करिे वाले योिाओं ंएवं कुशल अन्वेषणकतावओं ंमें नवराजमाि आपको प्रणाम; गुप्तचरों ंएवं सैन्यदूतों ंमें नवराजमाि आपको ििमि; खड्गिारी एवं तूणीरिारी में नवराजमाि आपको प्रणाम।

नमस्तीक्ष्णेषवे िा**युशधने** ि **नमः स्वायुधाय** ि
सुधन्वने ि **नमः सुतुत्याय** ि **पथ्याय** ि
नमः काट्याय ि **नीप्याय** ि ।।

तीक्ष्ण बाणों ंएवं असंख्य आयुिों ंका प्रयोग करिे वाले भगविा् रुि को प्रणाम, शुभप्रद नत्रशूल एवं मंगलप्रद ििुष (नपिाक) िारी आपको प्रणाम; संकीणव वीनथयों ंएवं नवसृतृत राजमागों में नवद्यमाि आपको प्रणाम; जलिारा एवं पववतीय जल-प्रपातों ंमें नवद्यमाि आपको प्रणाम।

नमः सूद्याय ि **सरस्याय** ि **नमो नाद्याय** ि
वैशन्ताय ि **नमः कूप्याय** िा**वट्याय** ि
नमो वर्ष्याय िा**वत्यावय** ि **नमो मेध्याय** ि
शवद्युत्याय ि ।।

कच्छभूनम (दलदल) एवं झीलों ंमें नवद्यमिा भगविा् रुि को िमि; िनदयों ंएवं सरोवरों ंमें नवद्यमिा आपको िमि; कूपों ंएवं गतों में नवद्यमिा को िमि; वषाव एवं समुिों ंमें नवद्यमिा आपको िमि; मेघों ंएवं नवद्युत् में नवराजमिा आपको पुिः-पुिः िमि।

नम ईशियाय िा**तप्याय** ि **नमो वात्याय** ि
रेन्वियाय ि **नमो वास्तव्याय** ि **वासुतुपाय** ि **।।**

शरद्कालिी मेघों ंएवं उग्रतापकारी सूयव में नवद्यमिा भगविा् रुि को प्रणाम; वायु एवं प्रलयकारी वषाव में नवद्यमिा आपको प्रणाम; भूनम एवं पशु सम्पदा में नवराजमिा आपको प्रणाम।

नमः सोमाय ि **रुद्राय** ि **नमस्ताम्राय** िा**रुणाय** ि
नमः शङ्गाय ि **पशुपतये** ि **नम उग्राय** ि
भीमाय ि **।।**

उमापनत एवं (संसार के) समस्त दुःखों ंके िाशकताव भगविा् रुि को पुिः-पुिः िमि, ताम्रवणी (उदीयमिा सूयव का रंग) एवं अरुणवणी (निनतज से ऊपर उि सूयव का वणव) आपको िमि; समस्त प्रानणयों ंके नलए शान्दन्त एवं सुखप्रदायक तथा सकल जीवसंरिक आपको िमि; उग्र (शतुरुओं ंके नलए) एवं भयकारक (नवरोनियों ंके नलए) आपको िमि।

नमो अगे्रवधाय ि **दूरेवधाय** ि **नमो हिे** ि
हनीयसे ि **नमो वृके्षेभ्यो हररकेशेभ्यो नमस्ताराय ।।**

अग्रभाग में न्दस्थत होकर शतुरुओं ंका िाश करिे वाले एवं दूर न्दस्थत रहकर शतुरुओं ंका संहार करिे वाले भगविा् रुि को प्रणाम; इस जगत् के समस्त वसुतु-पदाथों के संहारकताव एवं प्रलयकाल में सववहन्तारूप आपको प्रणाम; हररतवणी पत्रों ंसे युक्त विृरूप आपको प्रणाम; प्रणवस्वरूप भगविा् रुि आपको बारम्बार प्रणाम।

नमश्शिंभवे ि **मयोभवे** ि **नमः शिंकराय** ि
मयस्कराय ि **नमः शशवाय** ि **शशवतराय** ि **।।**

लौनकक एवं आध्यान्दत्मक आिन्द के स्रोत भगविा् रुि को िमि; पानथव एवं स्वनगवक सुख प्रदाता आपको िमि; कल्ाणस्वरूप एवं अन्य सब वसुतुओं ंसे अनिक कल्ाणकारी आपको िमि।

नमस्तीथ्यावय ि **कूल्याय** ि **नमः पायावय**
ाविायावय ि **नमः प्रतरणाय** िो**त्तरणाय** ि **नम**
आतायावय िा**लाध्याय** ि **नमः शष्प्याय** ि
फेन्याय ि **नमः शसकत्याय** ि **प्रवाह्याय** ि **।।**

तीथवस्थािों ंके पावि जल में तथा िनदयों ंके नकिारे पर न्दस्थत पनवत्र प्रतीकों ंमें नवद्यमिा भगविा् रुि को पुिः-पुिः प्रणाम; भवसमुि के इस तीर (समृन्दिप्रदाता के रूप में) एवं दूसरे तीर (अमृतत्वप्रदाता के रूप में) पर नवराजमिा आपको प्रणाम; आिुष्ठिा एवं ज्ञाि द्वारा पापसमूह के िाशकताव आपको प्रणाम; कमवफल-उपभोग एवं

पिुजवन्म के कारणस्वरूप आपको प्रणाम; कोमल तृणों ंएवं जल की तरंनगत फिे में नवद्यमिा आपको प्रणाम;
निदयों ंकी बालुका एवं प्रवाहमिा जल में नवद्यमिा आपको प्रणाम।

नम इररण्याय ि **प्रपथ्याय** ि **नमः शक शशलाय** ि
क्षयणाय ि **नमः कपशदवने** ि **पुलस्तये** ि **नमो**
गोष्प्याय ि **गृह्याय** ि **नमस्तल्प्याय** ि **गेह्याय** ि
नमः काट्याय ि **गह्वरेष्ठाय** ि **नमो हृदर्य्याय** ि
शनवेष्प्याय ि **।।**

उववरा भूनम एवं नवसृतृत राजपथों ंमें नवराजमिा भगविा रुि को िमि; नशलायुक्त भूनम एवं आवासयोग्य भूनम में नवराजमिा आपको िमि; जटा िारण करिे वाले एवं अपिे भक्तों ंको दशवि प्रदिा करिे वाले आपको िमि गोष्ठों् ं(गौशाला) एवं गृहों ंमें नवराजमिा आपको िमि शय्या में एवं नवशाल महलों ंमें नवराजमिा आपको
िमि; काँटीली झाडी युक्त विों ंएवं पववतीय-गुहाओं ंमें नवराजमिा आपको िमि; जलावतव (भाँवर) एवं तुषारकणों ं(ओस की बूँदों)ं में नवराजमिा आपको बारम्बार िमि।

नमः पिाँ सव्याय ि **रजस्याय** ि **नमः**
शुष्प्क्याय ि **हररत्याय** ि **नमो लोप्याय**
ीलिप्याय ि **नम ऊध्यावय** ि **सूयावय** ि **।।**

प्रत्ेयेक अणु एवं िूनल-कण में नवद्यमिा भगवि्रुि को पिुः-पिुः प्रणाम; शुष्क एवं हररत काष्ठ में
नवद्यमिा आपको प्रणाम; शुष्क भू-ित्र एवं हररत घास में नवद्यमिा आपको प्रणामः पृथ्वी एवं प्रबल-उनमवयों ंसे तरंनगत निदयों ंमें नवद्यमिा आपको प्रणाम।

नमः पणावय ि **पणवशद्याय** ि
नमोऽपगुरमाणाय ि**शभघ्नते** ि
नम आन्विदते ि **प्रन्विदते** ि **।।**

वृि के हररत पत्रों ंएवं शुष्क पत्रों ंमें नवद्यमिा' भगवि्रुि को िमि; (दिुों ंपर) प्रहार हेतु उद्यत-आयिु आपको िमि; (शतुरुओं ंको) मन्द एवं उग्र रूप से उत्पीनडत करिे वाले आपको िमि।

नमो वः शकररकेभ्यो देवाना हृदयेभ्यो
नमो शवक्षीणकेभ्यो नमो शवशिन्वत्केभ्यो
नम आशनहवतेभ्यो नम आमीवत्केभ्यः ।।

देवताओं ंके हृदयस्वरूप एवं भक्तों ंके नलए सववनिनिप्रदायक (भौनतक एवं आध्यान्दत्मक) भगवि्रुि को प्रणाम; अिुण्ण-अनविाशी आपको प्रणाम; सववमिोरथ-पूणवकताव आपको प्रणाम; सब ओर से दिुों ंका संहार करिे वाले आपको प्रणाम; नवपुलतापूणव रूपों ंमें स्वयं को अनभव्यक्त करिे वाले आपको प्रणाम।

द्रापे अन्धसिते दररद्रन्नीललोशहत ।
एषिां पुरुषाणामेषिां पशूनिां मा
भेमावऽरो मो एषिां शकिं िनाममत् ।।

हे न्यायदण्डिारी! हे अन्न-अनिपनत ! हे आिसक्त एवं स्विािी ! हे ीलललोनहत ! (हमारे) इ पररजिों ं एवं पशुओं ं में नकसी प्रकार का भय ि हो। इिमें से नकसी का िाश ि हो। इिमें से कोई भी रोगग्रस्त ि हो।

या ते रुद्र शशवा तनूः शशवा शवश्वाह भेषजी
। शशवा रुद्रस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ।।

हे भगवाि् रुि! आपका जो शान्त-सौम्य, (ज्ञाि एवं मोि प्रदायक) परमकल्याणकारक, समस्त व्यानियों ं को दूर करिे वाला परम-औषनि-रूप मंगलकारी स्वरूप है, उसके द्वारा हमारे जीवि को सुखी बिाइए।

इमिाँ रुद्राय तवसे कपशदवने
क्षयद्वीराय प्रभरामहे मशतम् ।
यथा नः शमसशद्वपदे ि**तुष्पदे**
शवश्विं पुष्टिं ग्रामे अन्वस्मन् अनातुरम् ।।

हम शत्रुसंहारक, जटािारी भगवाि् रुि के चरणों ं में अपिे मि-बुन्दि को समनपवत करते हैं तानक हमारे इस ित्र (ग्राम, भूनम अथवा देश) में मिुष्य एवं पशु प्रसन्न रहें, तथा समस्त प्राणी सभ प्रकार के किों ं से मुक्त होकर स्वस्थ-प्रसन्न रहें।

मृडा नो रुद्रोत नो मयसृ्कशध
क्षयद्वीराय नमसा शवधेम ते ।
यच्छिं ि **योश्च मनुरायजे**
शपता तदश्याम तव रुद्र
प्रणीतौ ।।

हे भगवाि् रुि! हमें इहलौनकक (भौनतक समृन्दि) एवं पारलौनकक (आध्यान्दत्मक कल्याण) सुख प्रदाि कीनजए। हमारे शत्रुओं ं (बाह्य एवं आन्तररक) के संहारक! हम पुिः-पुिः श्रिापूववक प्रणाम द्वारा आपको प्रसन्न करिा चाहते हैं; आपके प्रेममय अिुग्रह द्वारा हम समस्त दुःखों ं से मुन्दक्त तथा सवव-सुख प्राप्त करें जो हमारे नपता मिु िे प्राप्त नकये।

मा नो महान्तमुत मा नो अभवकिं
मा न उक्षन्तमुत मा न उशक्षतम् ।
मा नोऽवधीः शपतरिं मोत मातरिं
शप्रया मा नस्तनुवः रुद्ररीररषः ।।

हे भगवाि् रुि! हमारे वृिजिों ं अथवा युवाजिों, ं हमारे छोटे बालकों ं अथवा गभवस्थ नशशुओं ं का िाश िहीं ं कररए; हमारे माता अथवा नपता अथवा हमारे नप्रयजिों ं का वि िहीं ं कररए ।

मा नस्तोके तनये मा न आयुशष मानो गोषु मा
नो अशे्वषु रीररषः ।
वीरान्मा नो रुद्र भाशमतोऽवधीहवशविन्तो
नमसा शवधेम ते ।।

हे भगवि् रुि ! अपिे क्रोिावेश में हमारे पुत्रों, ं हमारे जीवि, हमारी गायों, ं हमारे अश्वों ंको कि मत दीनजए; हमारे वीर (उपयोगी) सेवकों ंका वि ि करिए; हम आहुनत-अपवण एवं बारम्बार िमि द्वारा आपको प्रसन्न करिा चाहते हैं।

आरातेृते गोघ्न उत पूरुषघ्ने
क्षयद्वीराय सुम्नमस्मे ते असुतु ।
रक्षा ि नो अशध ि देव बूरूह्यथा
निः शमव यच्छशद्वबहावः ।।

हे प्रभु! हमारे कल्याण हेतु िारण नकया गया आपका सौम्य स्वरूप, जो शतुरु-सेिा के मिुष्यों ंएवं पशुओं ं का िाश करता है; वह शान्त-सौम्य स्वरूप सदैव हमारे समीप रहे, हमारी रिा करे, हमारा उत्थाि करे, हमें सांसाररक एवं आध्यान्दत्मक वैभव प्रदाि करे।

सुतुशह शुरुतिं गतवसदिं युवानिं
मृगन्न भीममुपहतुलुमुग्रम् ।
मृडा जररतेृरे रुद्र स्तवानो अन्यनेृते
अस्मशन्नवपनुतु सेनाः ।।

महायशस्वी, (हृदय) गुहा में वास करिे वाले, नित्य युवा (िवीि), (शतुरुओं ंके एवं प्रलय काल में सृनि के) संहार के समय में उग्र नसंह के समाि भयंकर रुि की सववजि सुतुनत करें। हे भगवि् रुि! इस िश्वर देह के माध्यम से प्राथविा करिे वाले, हम सबको सुखी बिाइए। आपकी सेिा उि सबका िाश कर दे जो हमसे नभन्न हैं (अथावत् हमारे शतुरु हैं)।*

पररणो रुद्रस्य हेतुवृवणकुतु
परर तेृवेषस्य दुमवशतरघायोः ।
अव न्वस्थरा मघवद्भ्यस्तनुष्व
मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृडय ।।

दुिों ंके नवरुि उिाया गया भगवि् रुि का नविाशकारी आयुि एवं उिका क्रोि हमसे दूर रहे (हमें हानि ि पहुँचाये)। अपिे शरणापन्न मिुष्यों ंको अभीि वर प्रदाि करिे वाले भगवि् रुि! हम प्रणत-जिों ंपर क्रोनित मत होइए। हमारे पुत्रों–पौत्रों ंको सुख प्रदाि कररए।

मीढुष्टम शशवतम शशवो नः सुमना भव ।
परमे वृक्ष आयुधिं शनधाय कृशत्तिं वसान
आिर शपनाकम् शबभ्दागशह ।।

हे(भक्तों ंको) इन्दच्छत-वर-प्रदाता ! हे परमकल्याण- स्वरूप प्रभु! हम पर प्रसन्न होइए और अपिे अिुग्रह की वृनिकररए । अपिे संहारक-अस्त्रों ंको वृि के नशखर पर छोडकर, हमारे समि व्याघ्रचमविारी एवं नपिाकिारी(मात्र अपिे प्रतीकस्वरूप िारण नकया गया) रूप में प्रकट होइए।

----

* यह स्वयं के बाह्य एवं आन्तररक शतुरुओं ंपर नवजय हेतु प्राथविा है। हमारे वास्तनवक स्वरूप 'आत्मा' से अन्य जो कुछ भी है, वह हमसे नभन्न ही है।

शवशकररद शवलोशहत नमस्ेते असुतु भगवः ।
यास्ेते सहस्र हेतयोऽन्यमस्मशन्नवपनुतु ताः ।।

हे नवपुल-वर-प्रदाता! हे श्ेवेतवणी भगवाि् रुि! हे प्रभु, आपको पुिः-पुिः प्रणाम है। आपके असंख्य आयुि उि सबका िाश करें जो हमसे नभन्न हैं।

ध्यातव्य (Note): यह मन्त्, स्वयं के वास्तनवक स्वरूप 'आत्मा' से नवपरीत अन्य तत्त्वों ंके निराकरण के नलए है; ये नवपरीत तत्त्व हैं-रोग, निविता, अज्ञाि और परम सत्ता से पृथकत्व की भाविा।

सहस्राशण सहस्रधा बाहुवोस्तव हेतयः ।
तासामीशानो भगवः परीीना मुखा कृशध ।।

हे प्रभु! आपके हाथों ंमें सहस्रों ंप्रकार के जो असंख्य आयुि हैं; आप ही उिके स्वामी हैं। उि आयुिों ंके अग्रभागों ंको कृपापूववक हमसे नवपरीत नदशा में कर दीनजए।

सहस्राशण सहस्रशो ये रुद्रा अशध भूर्म्ाम् ।
तेषाँ सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।

पृथ्वी पर भगवाि् रुि के जो असंख्य रूप निवास करते हैं, उिके असंख्य ििुषों ंको प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं।

अन्वस्मन् महत्यणवेऽन्तररक्ेषे भवा अशध ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

अन्तररि रूपी इस महाि् सागर में वास करिे वाले भगवाि् रुि के नवनवि रूपों ंके (असंख्य ििुषों ंको प्रत्यश्ञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं)।

ध्यातव्य (Note): कोष्ठक नचह्ों ंमें नदया गया वाक्ांश मूल मन्त् में िहीं ंहै, इसे केवल िौ अंनतम-मन्त्ों ं के पश्चात् एक ही बार उच्चाररत नकया जाता है। परनुतु वाक् एवं भाव को पूणव करिे के नलए, हम इस वाक्ांश का प्रत्ेयेक अंनतम-मन्त् के बाद प्रयोग करेंगे।

नीलग्रीवाशशशतकण्ठाः शवाव अधःक्षमिाराः ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

नजिके कण्ठ का कुछ भाग ीिल वणव का तथा कुछ भाग श्वेेत वणव का है, जो पाताल लोक में वास करते हैं, भगवि् रुि के इि नवनवि रूपों ंके (असंख्य ि्ुिषों ंको प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं)।

नीलग्रीवान्वश्शशतकण्ठा शदव रुद्रा उपशश्रताः ।

(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

ीलि-वणव कण्ठ एवं श्वेेत-वणव कण्ठ वाले द्युलोक में (उसके स्वामी रूप में) वास करिे वाले भगवि् रुि के नवनभन्न रूपों ंके (असंख्य ि्ुिषों ंको प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं)।

ये वृक्ेषेषु सन्विञ्जरा नीलग्रीवा शवलोशहताः ।

(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

कोमल बालतृण के समाि पीतवणी, कभी लोनहतवणी, ीलग्रीवा, वृिों ंपर (उिके अनिपनत रूप में) वास करिे वाले भगवि् रुि के नवनभन्न रूपों ंके (असंख्य ि्ुिषों ंको प्रत्यश्ञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं।)

ये भूतानामशधपतयो शवशशखासः कपशदवनः ।

(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

नजिमें कुछ मुन्दण्डत केश हैं, कुछ जटािारी हैं, भूत-नपशाचों ंके अनिपनत रूप भगवि् रुि के नवनभन्न रूपों ंके (असंख्य ि्ुिषों ंको प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं)।

ये अन्ेनेषु शवशवध्यन्वन्त पात्ेरेषु शपबतो जनान् ।

(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

अन्नभोक्ता प्रानणयों ंको पीनडत करिे वाले (कफ-वात-नपत्त ािुवैषम्य द्वारा) तथा पात्रों ंमें पाि करिे वालों ंको (नवनवि व्यानियों ंद्वारा) पीनडत करिे वाले भगवि् रुि के नवनभन्न रूपों ंके (असंख्य ि्ुिषों ंको प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं)।

ये पथिां पशथरक्षय ऐलबृदा यवुयुधः ।

(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

समस्त मागों (इहलौनकक एवं पारलौनकक) की रिा करिे वाले, सभी प्रानणयों ंको भोज्य-सामग्री प्रदाि करिे वाले, शत्रुओं ंसे युि करके उन्ें परास्त करिे वाले भगवि् रुि के नवनभन्न रूपों ंके (असंख्य ि्ुिषों ंको प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं)।

ये तीथावशन प्रिरन्वन्त सृकावन्तो शनषशङ्गणः ।

(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।)

तीक्ष्ण खड्ग एवं भयंकर आयुि ारण कर (तीथवस्थिा की रिा हेतु) तीथों में नवचरण करिे वाले भगवि् रुि के नवनभन्न रूपों ंके (असंख्य ि्ुिषों ंको प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं)।

य एतावन्तश्च भूया सश्च शदशो रुद्रा शवतन्वस्थरे ।

तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वाशन तन्मशस ।।

भगवि् रुि के इि सभी रूपों, तथा दसों नदशाओं में व्याप्त अन्य अिैकोक रूपों के असंख्य िुिषों को प्रत्यञ्चारनहत करके हम सहस्र-योजि दूर रख देते हैं।

नमो रुद्रेभ्यो ये पृशथव्यिां येऽन्तररक्षे ये शदशव येषामन्निं
वातो वषवशमषवस्तेभ्यो दश प्रािीदवश दशक्षणा दश
प्रतीिीदवशोदीिीदवशोध्वावस्तेभ्यो नमस्ते नो मृडयन्तु
ते यिं शद्विो यश्च नो द्वेशष्ट तिं वो जम्भे दधाशम ।।

हे भगवि् रुि! आपके जो नवनवि रूप पृथ्वी, अन्तररि एवं द्युलोक में नवद्यमाि हैं तथा नजिके बाण क्रमशः अन्न, पवि एवं वृनिरूप हैं, उन्हें पुिः-पुिः प्रणाम। उिके नलए दसों अाँगुनलयााँ जोडकर (हाथ जोडकर) पूवव
नदशा की ओर प्रणाम, दसों अंगुनलयााँ जोडकर दनिण नदशा की ओर प्रणाम, दसों अाँगुनलयााँ जोडकर पनश्चम नदशा, दसों अाँगुनलयााँ जोडकर उत्तर नदशा तथा दसों अाँगुनलयााँ जोड कर ऊपर की ओर प्रणाम। वे हमें सुखी बिायें। हे
रुि! हम नजिसे द्वेष करते हैं, तथा जो हमसे द्वेष करते हैं, उन्हें हम आपके नवशाल खुले मुखों में िालते हैं।

त्र्यम्बकिं यजामहे सुगन्विन्धिं पुशष्टवधवनम् ।
उवावरुकशमव बन्धनान्मृत्योमुवक्षीय माऽमृतात् ।।

हम नदव्य गन्ध (ऊजाव) युक्त, (अपिे भक्तों के शन्दक्त-समृन्दि-विवक, नत्रिेत्रिारी प्रभु की आरािािा करते हैं; हम अमृतत्व प्रान्दप्त हेतु मृत्यु से उसी प्रकार मुक्त हो जायें नजस प्रकार उवावरुक (ककडी) पक जािे पर अपिी लता से पृथक् अथावत् मुक्त हो जाता है।

यो रुद्रोऽशिौ योऽप्सु य ओषधीषु यो रुद्रो
शवश्वा भुवना शववेश तस्मै रुद्राय नमो अस्तु ।।

उि भगवि् रुि को प्रणाम जो अनि में हैं, जल में हैं, औषनियों में हैं तथा जो समस्त लोकों में व्याप्त हैं।

तमु टुशह यः न्वस्वषुः सुधन्वा यो
शवश्वस्य क्षयशत भेषजस्य ।
यक्ष्वामहे सौमनसाय रुद्रिं
नमोशभदेवमसुरिं दुवस्य ।।

भगवि् रुि की शरण में जाइए जो उत्तम िुिष एवं अतुयुत्तम बाणों से सुसन्दित हैं, जो सांसाररक व्यानियों की समस्त औषनियों के स्रोत हैं। हम मि की शान्दन्त हेतु, दुःखहन्ता भगवि् रुि को पुिः-पुिः प्रणाम कर उिकी आरािािा करते हैं।

अयिं मे हस्तो भगवानयिं मे भगवत्तरः ।
अयिं मे शवश्वभेषजोऽय शशवाशभमशवनः ।।

यह मेरा हाथ आशीवावनदत है, यह मेरा हाथ अत्यनिक आशीवावनदत है, यह संसार की समस्त व्यानियों ोंके नलए औषनिस्वरूप है, क्ोंनक इसे (पूजा-स्थल में) भगवाि् नशव का स्पशव प्राप्त हुआ है।

ये ते सहस्रमयुतिं पाशा मृत्यो मत्यावय हन्तवे ।
तान्यज्ञस्य मायया सवावनव यजामहे ।।

हे हन्ता (मृतुयु की मृतुयुस्वरूप) भगवाि् रुि! मरणशील प्राणी के िाश हेतु आपके जो ये सहस्र, दस-सहस्र पाश हैं, हम यज्ञ (सत्कमव) की शन्दक्त द्वारा उि सब पाशों ोंको स्वयं से दूर करते हैं।

मृत्यवे स्वाहा । मृत्यवे स्वाहा
ॐ नमो भगवते रुद्राय शवष्णवे मृतुयुमे पाशह ।।

यह आहुनत परम मृतुयु (मृतुयु की मृतुयुस्वरूप अथवा समस्त बुराई, पाप एवं दुःखों ोंके िाशकताव) को अनपवत हो। यह आहुनत परम संहारक को अनपवत हो। सववव्यापक भगवाि् रुि को श्रिापूववक प्रणाम। आप मेरी मृतुयु (िश्वर जीवि) से रिा कररए।

प्राणानिां ग्रन्वन्थरशस रुद्रो मा शवशान्तकः ।
तेनान्नेनाप्यायस्व ।। ॐ शान्वन्तः शान्वन्तः शान्वन्तः ।।

हे भगवाि् रुि! आप प्राणों ोंके केन्द्र हैं, अतः आप हममें संहारक के रूप में प्रवेश ि कररए। अपिे अिुग्रह रूपी अन्न से हमे नवपुलता एवं पूणवता प्रदाि कररए। ॐ शान्दन्तः शान्दन्तः शान्दन्तः ।।

ॐ ततुपुरुषाय शवद्महे
महादेवाय धीमशह ।
तन्नो रुद्रः प्रिोदयात् ।।

हम परम पुरुष से हानदवक प्राथविा करते हैं; तथा महादेव का ध्याि करते हैं। भगवाि् रुि (नशव) हमें (जीवि के मुख्य लक्ष्य की ओर) निदेनशत करें।

ॐ शान्वन्तः शान्वन्तः शान्वन्तः ।।

अथ पुरुषसूक्तम्

ॐ सहस्रशीषाव पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूशमिं शवश्वतो वृत्वाऽत्यशत्तष्ठद्दशाङ्गुलम् ।।

जो सहस्र नसरों,ं सहस्र ित्रों ंएवं सहस्र चरणों ंवाले परम पुरुष हैं, वे समूपूणव पृथ्वी को सब ओर से व्याप्त करके भी इससे दश-अंगुली परे हैं।

ध्यातव्य (Note) - यह वेद के सुप्रनसि 'पुरुष सूक्त' का प्रथम मन्त् है। इसमें समूपूणव सृनि की अिभवातीत समग्रता की, तथा इस समूपूणव सृनि को अिुप्रानणत करिे वाली वैनश्वक चेतिा की 'परम पुरुष' के रूप में अविारणा की गयी है। इसमें प्रतुयुक्त 'भूनम' शब्द से अनभप्राय समूपूणव सृनि है। 'दशाङ्गलम्' का अथव दश अाँगुनलयों ंके बराबर दूरी है जो हृदय एवं िानभ के मध्य की दूरी को इंनगत करती है; क्ोंनंक हृदय को 'आत्मा' का स्थाि मािा गया है तथा 'िानभ' को समस्त सृनि का मूल केन्द्र मािा गया है। 'दश' शब्द का अनभप्राय 'अिन्तता' भी हो सकता है क्ोंनंक अंक 'िौ' तक ही होते हैं तथा जो िौ से परे है, वह गणिा से परे है।

पुरुष एवेदिं सवं यद्भूतिं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनाशतरोहशत ।।
एतावानस्य मशहमाऽतो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य शवश्वा भूताशन शत्रपादस्याऽमृतिं शदशव ।।

यह समस्त (सृनि) परम पुरुष ही हैं; जो अभी है, भूतकाल में था एवं भनवष्यकाल में होगा-सब परम पुरुष ही हैं। वे अमृतत्व के स्वामी हैं, क्ोंनंक वे पदाथव (ब्रह्माण्ड) से परे हैं। इस प्रकार की उिकी मनहमा है; परन्तु वे अपिी इस भव्य मनहमा से भी अनिक महाि् हैं। उिका एक पाद (चतुथाांश) ही यह समस्त ब्रह्माण्ड है; तथा उिके नत्रपाद इससे परे अमृत-तत्त्व रूप में -प्रकाशमाि हैं।

शत्रपादूध्वव उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवात्पुनः ।
ततो शवष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अशभ ।।
तस्माशद्वराडजायत शवराजो अशधपूरुषः ।
स जातो अत्यररच्यत पश्चाद्भूशममथो पुरः ।।

इस जगत् से परे वह नत्रपाद-नवभूनत रूप में प्रकाशमाि हैं, तथा उिके एक पाद से ही यह ब्रह्माण्ड प्रकट हुआ। नफर वे जड-चेति जगत् में पररव्याप्त हुए। उि परम पुरुष से वैनश्वक देह (नवराट्) की उत्पनत्त हुई; और इस नवराट् देह में सववव्यापी चेतिा अनभव्यक्त हुई। इस प्रकार स्वयं को अनभव्यक्त करिे के पश्चात्, वे परम पुरुष समस्त सृनि, इस पृथ्वी एवं इस शरीर आनद रूप में प्रकट हुए।

यत्पुरुषेण हशवषा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तो अस्यासीदाज्यिं ग्रीष्म इध्मः शरद्धशवः ।।
तिं यज्ञिं बशहवशष प्रौक्षन् पुरुषिं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ।।

जब देवताओं िे एक वैनश्वक यज्ञ (गहि ध्याि के रूप में मािस-यज्ञ) नकया; उसमें (परम पुरुष के अनतररक्त अन्य बाह्य सामग्री ि होिे के कारण) स्वयं परम पुरुष ही पनवत्र 'हनवष्य' (हव्य-सामग्री) बिे; तथा वसन्त ऋतु 'घी', ग्रीष्म ऋतु 'ईंिि' एवं शरद ऋतु 'हनव' के रूप में संकन्दल्पत की गयी। उि आनदपुरुष को ध्याि-यज्ञ का नवषय बिाकर देवताओं, साध्यों एवं ऋनषयों िे यह (प्रथम यज्ञ) सम्पन्न नकया।

तस्माद्यज्ञात्सववहुतः सिंभृतिं पृषदाज्यम् ।
पशू स्ता श्चक्रे वायव्यानारण्यान् ग्राम्याश्चये ।।
तस्माद्यज्ञात्सववहुतः ऋिः सामाशन जशज्ञरे ।
छन्दा शस जशज्ञरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।।

उि वैनश्वक-यज्ञ रूपी पुरुष से दनि एवं घी का पनवत्र नमश्रण (आहुनत हेतु) उत्पन्न हुआ। तत्पश्चात् उिसे वायु में उडिे वाले (पिी वगव), वि में रहिे वाले एवं ग्राम्य में रहिे वाले पशु प्रकट हुए। उि वैनश्वक यज्ञ-पुरुष से ऋग्वेद एवं सामवेद उत्पन्न हुए; उिसे ही छन्द उत्पन्न हुए; उिसे ही यजुवेद प्रकट हुआ।

तस्मादश्वा अजायन्त ये के िोभयादतः ।
गावो ह जशज्ञरे तस्मात् तस्माद् जाता अजावयः ।।
यत्पुरुषिं व्यधधुः कशतधा व्यकल्पयन् ।
मुखिं शकमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ।।

उि यज्ञ-पुरुष से अश्व उत्पन्न हुए; दो दन्तपंन्दक्तयों ंवाले पशु उत्पन्न हुए; उिसे ही गौएाँ, भेड-बकररयााँ उत्पन्न हुए। जब देवों ंि (वैनश्वक-यज्ञ रूप) उि परम पुरुष का ध्यिा नकया, तब उन्ोंिे नकतिे प्रकार से उिकै नवभाजि की कल्पिा की ? उिका मुख नकसे कहा गया; उिकी भुजाएाँ, जंघाएाँ एवं चरण नकन्ें कहा गया ?

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्या शूद्रो अजायत ।।
न्द्रिमा मनसो जातश्चक्षोः सूयो अजायत ।
मुखाशदन्द्रश्चाशिश्च प्राणाद्वायुरजायत ।।

इि परम पुरुष के मुख से ब्राह्मण (आध्यान्दत्मक ज्ञाि एवं दीन्दप्त) प्रकट हुए, उिकी भुजाओं ंसे ित्रय (प्रशासनिक एवं सैन्य शन्दक्त), जंघाओं ंसे वैश्य (व्यवसाय-उद्योग िमता) तथा उिकै चरणों ंसे शूि (उत्पादक एवं पोषण शन्दक्त) प्रकट हुए। उिकै (वैनश्वक) मि से चन्द्रमा (मि का प्रतीक) उत्पन्न हुए; िुओं ंसे सूयव (आत्मतत्त्व एवं चेतिा का प्रतीक) उत्पन्न हुए। उिकै मुख से इन्द्र (ग्रहण शन्दक्त एवं नक्रया शन्दक्त) तथा अनि (संकल्प शन्दक्त) प्रकट हुए; उिकी प्राण शन्दक्त से वायु उत्पन्न हुई।

नाभ्या आसीदन्तररक्षिं शीणो द्यौः समवतवत ।
पद्भ्यिां भूशमशदवशः श्रोत्रात्तथा लोका अकल्पयन् ।।
सप्तास्यासन् पररधयन्वरःसप्त सशमधः कृताः।
देवा यद्यज्ञिं तन्वाना अबिन् पुरुषिं पशुम् ।।

(उस वैनश्वक-ध्यिा रूपी यज्ञ में) परम पुरुष की िानभ से अन्तररि प्रकट हुआ, उिकै नशर से द्युलोक, उिकै चरणों ंसे पृथ्वी तथा उिकै काोिं ंसे नदशाएाँ उत्पन्न हुईं। इस प्रकार उि परम पुरुष में ये सब लोक कन्दल्पत हुए। परम पुरुष को ध्यिा-यज्ञ का नवषय बिाकर देवताओं ं(प्राण, इन्दन्द्रय एवं मि) िे जब वैनश्वक यज्ञ नकया, तब इस यज्ञ-वेदी की सप्त पररनियााँ (गायत्री आनद सप्त छन्द) थीं ंतथा नत्रसप्त अथावत् इक्कीस सनमिाएाँ (बारह मास, पााँच ऋतुएाँ, तीि लोक एवं सूयव) थीं।ं

यजे्ञेन यज्ञमयजन्त देवाःताशन धमावशण प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकिं मशहमानः सिन्ते
यत्र पूवे साध्याः सन्वन्त देवाः ।।

(वैनश्वक ध्यिा रूपी) यज्ञ द्वारा देवताओं ंि (परम-पुरुष रूपी) यज्ञ का पूजि-यजि नकया। ये (देव) ही प्रथम सृनि थे एवं (सृनि का पालि करिे वाले) प्रथम िमव थे। महापुरुषजि (इस प्रकार के ध्यिा द्वारा परम पुरुष की आरािा करिे वाले) उस परम िाम को प्राप्त करते हैं जहााँ वे प्रथम ध्याता (देव-गण, साध्यगण) रहते हैं नजन्ोंिे परम-पुरुष की इस प्रकार प्रथम आरािा की थी।

वेदाहमेतिं पुरुषिं महान्तमाशदत्यवणं तमसः परस्तात् ।
तमेव शवशदत्वाऽशतमृतुयुमेशत नान्यः पन्था
शवद्यतेऽयनाय ।।

मैं अन्धकार से परे, सूयव के समाि दीन्दप्तमन्त इस परम पुरुष को जािता हााँ। केवल इि पुरुष को जाििे से ही, मिुष्य मृतुयु के परे चला जाता है; इसके अनतररक्त मृतुयु के परे जािे का कोई अन्य मागव िहीं ंहै।

ॐ शान्वन्तः शान्वन्तः शान्वन्तः।।

अथ िारायणसूक्तम्

ॐ सहस्रशीषव देविं शवश्वाक्षिं शवश्वशमु्भुवम् ।
शवश्विं नारायणिं देवमक्षरिं परमिं पदम् ।।

यह समूपूणव ब्रह्माण्ड स्वयं श्री िारायण ही है जो सहस्र नसरों ंएवं सहस्र ित्रों ंवाले (सववव्यापक एवं सववज्ञ) हैं, अनविाशी, परम प्रकाशविा तथा समस्त नवश्व को आिन्द प्रदाि करिे वाले हैं।

ध्यातव्य (Note) - इस श्लोक के साथ वैनदक मन्त्ों ंकी यह सुप्रनसि सुतुनत आरम्भ होती है जो परम पुरुष के इस सृनि के रूप में अनभव्यक्त होिे का वणवि करती है।

शवश्वतः परमिं शनत्यिं शवश्विं नारायण हररम् ।
पुरुषस्तशद्वश्वमुपजीवशत ।।
शवश्वमेवेदिं

यह ब्रह्माण्ड स्वयं परम पुरुष ही है; अतः यह उिपर ही आनश्रत है; वह शाश्वत तत्त्व इस ब्रह्माण्ड से (सब प्रकार से) परे है, वह सववव्यापक परम तत्त्व सबके पापों ंका िाशकताव है।

पशतिं शवश्वस्यात्मेश्वर शाश्वत शशवमच्युतम् । नारायणिं महाज्ञेयिं शवश्वात्मानिं परायणम् ।।

वह श्री िारायण समूपूणव सृनि के रिक, समस्त जीवों ंके स्वामी, शाश्वत, परम पावि, अनविाशी, समस्त सृनि के लक्ष्य, ज्ञेय वसुतुओं ंमें सवावनिक महाि्, समस्त प्रानणयों ंके आत्मा एवं परम आश्रय हैं।

नारायणः परिं ब्रह्म तत्त्विं नारायणः परः ।
नारायणः परो ज्योशतरात्मा नारायणः परः ।।
नारायणः परो ध्याता ध्यानिं नारायणः परः ।।

भगवाि् श्री िारायण परम ब्रह्म हैं, भगवाि् श्री िारायण परम तत्त्व हैं; भगवाि् श्री िारायण परम ज्योनत हैं; भगवाि् श्री िारायण परम आत्मा हैं; भगवाि् श्री िारायण परम ध्याता हैं; भगवाि् श्री िारायण ही परम ध्याि हैं।

यच्च शकिंशिज्जगत्सवं दृश्यते श्रूयतेऽशप वा ।
अन्तबवशहश्च तत्सवं व्याप्य नारायणः न्वस्थतः ।।

इस जगत् में जो कुछ भी नदखायी देता है तथा सुिायी देता है, उस सबको भीतर एवं बाहर से पररव्याप्त करके शाश्वत नदव्य सत्ता 'भगवाि् श्री िारायण' न्दस्थत हैं।

अनन्तमव्ययिं कशव समुद्रेऽन्तिं शवश्वशमु्भुवम् ।
पद्मकोशप्रतीकाशिं हृदयिं िाप्यधोमुखम् ।।

वे अिन्त, अनविाशी, सववज्ञ, हृदय-समिु में वास करिे वाले, समस्त नवश्व को आिन्द प्रदाि करिे वाले तथा समस्त प्रानणयों ंके परम लक्ष्य हैं; वे स्वयं को उस हृदयाकाश में अनभव्यक्त करते हैं नजसकी तुलिा कमल-पुष्प की एक अिौमुखी कनलका से की जाती है।

अधो शनष्ट्या शवतस्त्याने्ते नाभ्यामुपरर शतष्ठशत ।
ज्वालामालाकुलिं भाशत शवश्वस्यायतनिं महत् ।।

कण्ठ से एक बानलश्त (लगभग ९ इंच) िीचे िानभ से ऊपर स्थिा (अथावत् हृदय में जो मिुष्यों ंमें शिु चेतिा के प्रकटीकरण का स्थाि है) में अनिज्वालाओं ंकी मालाओं ंसे सुशोनभत, अत्यन्त प्रकाशमय, वह नवश्व का महाि् अनिष्ठाि नवभानसत होता है।

सन्तत शशलाशभस्तु लम्बत्याकोशसिंशनभम् ।
तस्याने्ते सुशषर् सूक्ष्मिं तन्वस्मन् सवं प्रशतशष्ठतम् ।।

सब ओर से िानडयों ंसे नघरी, हृदय रूपी कमल-कनलका अिौमुखी न्दस्थनत में रहती है। उसमें एक सूक्ष्म प्रकोष्ठ अथवा नछि (सुषुम्ना िाडी) होता है; वहीं ंवह सवव-अनिष्ठाि प्रनतनष्ठत है। तस्य मध्ेये

महानशिशववश्वशिवशववश्वतोमुखः ।
सोऽग्रभुग् शवभजन् शतष्ठन् आहारमजरः कशवः ।।

हृदय के उस सूक्ष्म प्रकोष्ठ में वह महानि न्दस्थत है, जो अजर है, सववज्ञ है, नजसकी नजह्वाएँ एवं मुख सभी नदशाओं ंमें व्याप्त हैं; जो अपिे सिुख रखे आहार को ग्रहण करती है और स्वयं में आत्मसात् करती है।

शतयवगूध्ववमधःशायी रश्मयस्तस्य सन्तताः ।
सिंतापयशत स्विं देहमापाततलमस्तकम् ।
तस्य मध्ेये वशिशशखा अणीयोध्वाव व्यवन्वस्थतः ।।

उसकी रन्दियाँ ऊपर, िीचे, दायें एवं बायें सववत्र व्याप्त हैं, जो नसर से पैर तक समूपूणव शरीर को उष्ण करती हैं। उस (अनि) के मध्य में सूक्ष्मतम अनिनशखा (वनह्नशखा) न्दस्थत है।

ध्यातव्य (Note): सांसाररक सुख-दुःख से बाँिे होिे के कारण चेतिा सांसाररकता के आवरण से ढकी रहती है, अतः अज्ञाि के घिे बादलों ंके मध्य यह चेतिा सूक्ष्म अनि-नशखा के समाि प्रतीत होती है। परन्तु जब जीवात्मा सांसाररकता के तल से ऊपर उिती है, तब उसे चेतिा की अिन्तता का साक्षात्कार होता है।

नीलतोयदमध्यस्थाद् शवद्युले्लेखेव भास्वरा ।
नीवारशूकवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपमा ।।

जल से भरे श्यामवणी मेघों ंके मध्य नवद्युत्-लेखा के समाि दीन्दप्तमन्त, िीवार-शूक (िाि की बाली का अग्र भाग) के समाि तन्वी अथावत् बहुत पतली, स्वणव के समाि पीतवणी, परमाणु-सम सूक्ष्म यह (वनह्नशखा) प्रखरता से चमकती है।

तस्याः शशखाया मधे्ये परमात्मा व्यवन्वस्थतः ।
स ब्रह्म स शशवः स हररः सेन्द्रः सोऽक्षरः
परमः स्वराट् ।।

इस अनिनशखा के मध्य परमात्मा निवास करते हैं। वह परमात्मा ही ब्रह्मा (सृनिकताव्, नशव (संहारकताव्, हरर (पालिकताव), इन्द्र (शासिकताव) हैं; वह अनविाशी, परम स्वतन्त् सत्ता हैं।

ऋत सत्यिं परिं ब्रह्म पुरुषिं कृष्णशपिंगलम् ।
ऊध्वरेतिं शवरूपाक्षिं शवश्वरूपाय वै नमो नमः ।।

उि सववस्वरूप परमात्मा को पिु:-पिुः प्रणाम जो परम सत्य हैं, परम ब्रह्म हैं, परम तत्त्व हैं, कृष्णपीतवणव पुरुष हैं, केन्द्रीभूत शन्दक्त अथावत् सववशन्दक्तमाि् एवं सववदृिा हैं।

ॐ नारायणाय शवद्महे वासुदेवाय धीमशह ।
तन्नो शवष्णुः प्रचोदयात् ।।

हम भगवाि् श्री िारायण से हानदवक प्राथविा करते हैं, तथा भगवाि् वासुदेव का ध्याि करते हैं; वे महानवष्णु हमें (जीवि के परम लक्ष्य की ओर) निदेनशत करें।

ॐ शान्वन्तः शान्वन्तः शान्वन्तः ।।

अथ श्रीसूक्तम्

शहरण्यवणां हररणी िंसुवणवरजतस्रजाम् ।
िन्द्रिां शहरण्मयी िंलक्ष्मी िंजातवेदो म आवह ।।
तिां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगाशमनीम् ।
यस्यिां शहरण्यिं शवन्देयिं गामश्विं पुरुषानहम् ।।

हे अनिदेव! आप स्वणव के समाि दीन्दप्तमन्त, पीतवणी, स्वणव एवं रजत के हार पहििे वाली, चन्द्रमा के समाि शुभ्रकान्दन्त युक्त, िि-वैभव की साकार नवग्रह 'देवी लक्ष्मी' का मेरे नलए आह्वाि करें। हे अनिदेव ! उि देवी लक्ष्मी का मेरे नलए आह्वाि करें जो अपलायिशीला (न्दस्थर) हैं तथा नजिके आशीवावद से मैं स्वणव, गौ, अश्व तथा पुत्रानद प्राप्त करूँगा।

अश्वपूवां रथमध्यिां हन्वस्तनादप्रबोशधनीम् ।
शश्रयिं देवीमुपह्वये श्रीमाव देवीजुवषताम् ।।
किां सोन्वस्मतिां शहरण्यप्राकारामादाव ज्वलन्ती िंतृप्तिां
तपवयन्तीम् ।

पद्म न्वस्थतिां पद्मवणां ताशमहोपह्वये शश्रयम् ।।

मैं उि श्री (देवी लक्ष्मी) का आह्वाि करता हाँ नजिके आगे अश्वों ंकी पंन्दक्त है, मध्य में रथ है, जो हानथयों ंके उच्च स्वरों ंसे प्रबोनित (जगायी जाती) की जाती हैं तथा जो नदव्य तेजोमयी हैं। वे देवी मुझ पर कृपा करें। मैं यहााँ उि श्री (देवी लक्ष्मी) का आह्वाि करता हाँ जो परमािन्द का मूनतवमन्त स्वरूप हैं, नजिके मुख पर मिोहारी मुस्काि है, नजिकी स्वणव के समाि उज्ज्वल कान्दन्त है, जो आदाव हैं (मािो अभी िीर सागर से निकली हों)ं, जो अत्यन्त दीन्दप्तमती हैं, तृन्दप्त स्वरूप हैं, जो अपिे भक्तों ंकी मिोकामिाओं ंको पूणव करती हैं, जो पद्म-पुष्प पर नवराजमाि हैं तथा पद्म-पुष्प के समाि अत्यन्त सुन्दर हैं।

िन्द्रिां प्रभासिां यशसा ज्वलन्ती ि
शश्रयिं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तिां पशद्मनीमी िंशरणमहिं प्रपद्ये
अलक्ष्मीमे नश्यतिां त्विां वृणे ।।
आशदत्यवणे तपसोऽशधजातो
वनिशतस्तव वृक्षोऽथ शबल्वः ।
तस्य फलाशन तपसा नुदनुतु
मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ।।

मैं उि देवी लक्ष्मी की शरण ग्रहण करता हाँ जो चन्द्रमा के समाि सौन्दयवयुक्त हैं, अत्यन्त तेजोमयी हैं, सुयश के प्रकाश से दीन्दप्तमती हैं, देवगणों ंद्वारा पूनजता हैं, अत्यन्त उदारहृदया हैं तथा कमल के पुष्प समाि मिोहर हैं। उिकी कृपा से मेरे दुभावग्य का िाश हो। हे देवी! मैं स्वयं को आपके पावि चरणों ंमें समनपवत करता हाँ। हे सूयव के समाि देदीप्यमाि! आपकी शन्दक्त से ही नबल्ववृि (के समाि), अन्य विस्पनत-पौिे आनद उत्पन्न हुए हैं। उिके फल आपके अिुग्रह से हमारे बाह्य एवं भीतर की समस्त अशुभता एवं अज्ञाि को दूर करें।

उपैतु मिां देवसखः कीशतवश्च मशणना सह ।
प्रादुभूवतोऽन्वस्म राष्टेरऽन्वस्मन् कीशतवमृन्वद्धिं ददातु मे ।।
कुषुन्वत्पपासामलिां ज्येष्ठामलक्ष्मी िंनाशयार्म्हम् ।
अभूशतमसमृन्वद्धिं ि सवां शनणवद मे गृहात् ।।

हे देवी लक्ष्मी! मैं इस िि-सम्पदा युक्त रिार में उत्पन्न हुआ हाँ। भगवाि् नशव के सखा (कुबेर) एवं कीनतव मुझे प्राप्त हों।ं ये दोिों ं(मेरे साथ रहकर) मुझे यश एवं समृन्दि प्रदाि करें। मैं देवी लक्ष्मी की बडी बहि 'अलक्ष्मी' का िाश चाहता हाँ जो िुिा, नपपासा तथा सब प्रकार की अशुभता-दररिता की प्रतीक हैं। हे देवी लक्ष्मी ! आप मेरे गृह से समस्त प्रकार के दाररद्र्य एवं अमंगल को दूर करें।

गन्धद्वारिां दुराधषां शनत्यपुष्टिां करीशषणीम् ।
ईश्वरी िंसववभूतानिां ताशमहोपह्वये शश्रयम् ।।
मनसः काममाकूशतिं वािः सत्यमशीमशह ।
पशूनिां रूपमन्नस्य मशय श्रीः श्रयतिां यशः ।।

मैं देवी लक्ष्मी का आह्वाि करता हाँ जो गन्धद्वारा हैं अथावत् नजन्हें जाििे का माध्यम सुगन्ध है (जो मुख्यतया गौओं ंमें निवास करती हैं), जो अपरानजता हैं, जो नित्यपुिा हैं (सत्य आनद सद्गुणों ंसे सम्पन्न), नजिकी नवपुल कृपा

गोमय में दृनिगोचर होती है (गौ सवावनिक पनवत्र प्राणी हिो के कारण) तथा जो समस्त प्रानणयों ंकी स्वानमिी हैं। हे देवी! हमारी सभी इच्छाएँ एवं कामिाएँ पररपूणव हों,ं हमारी वाणी को सत्यता प्राप्त हो, हमें पशु-सम्पदा एवं अन्नानद भोज्य-पदाथव प्रचुर रूप में प्राप्त हों।ं मुझे (आपके भक्त को) यश एवं समृन्दि प्राप्त हो।

कदवमेन प्रजा भूता मशय सिंभव कदवम ।
शश्रयिं वासय मे कुले मातरिं पद्ममाशलनीम् ।।
आपः सृजनुतु शिग्धाशन शिक्लीत वस मे गृहे ।
शनिदेवी िंमातरशश्रयिं वासय मे कुले ।।

हे देवी लक्ष्मी! कदवम आपकी सन्तिा हैं। अतः हे कदवम, आप मुझमें निवास करें। आप पद्मपुष्पों ंकी माला िारण करिे वाली माता लक्ष्मी को हमारे कुल में स्थानपत करें। पनवत्र जल मैत्रीपूणव सम्बन्धों ंका सृजि करे। हे नचक्लीत (श्री की सन्तिा) । आप मेरे गृह में वास करें तथा माता लक्ष्मी (श्री) को मेरे कुल में वास करायें।

आद्राव पुष्कररणी िंपुशष्टिं सुवणां हेममाशलनीम्।
सूयाव शहरण्मयी िंलक्ष्मी िंजातवेदो म आवह ।।
आदाव यः कररणी िंयशष्टिं शपङ्गलिां पद्ममाशलनीम् ।
ण्द्रिां शहरण्मयी िंलक्ष्मी िंजातवेदो म आवह ।।

हे अनिदेव! आप मेरे नलए उि देवी लक्ष्मी का आह्वाि करें जो स्वणव के समाि उज्ज्वल कान्दन्त से युक्त हैं, सूयव के समाि दीन्दप्तमन्त हैं, नदव्य सुगन्दन्ध सम्पन्न हैं, सवोच्च शन्दक्तस्वरूपा हैं, नवनवि आभूषणों ंसे शोनभत हैं तथा िि-सम्पदा की देवी हैं। हे अनिदेव! आप मेरे नलए उि देवी लक्ष्मी का आह्वाि करें जो स्वणव के समाि उज्ज्वल कान्दन्त से युक्त हैं, चन्द्रमा के समाि प्रफुल्लवदिा हैं, सुगन्दन्धत िव्यों ंसे अनभनषक्त हैं, (स्वनगवक गजों ंद्वारा अनपवत) कमल-पुष्पों ंसे नवभूनषत हैं, पुनि-समृन्दि की अनिष्ठात्री देवी हैं, पीतवणी हैं तथा जो पद्मपुष्पों ंकी माला िारण करती हैं।

तिां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगाशमनीम् ।
यस्यिां शहरण्यिं प्रभूतिं गावो दास्योऽश्वान्वन्वने्देयिं
पुरुषानहम् ।।

हे अनिदेव! आप मेरे नलए उि लक्ष्मी देवी का आह्वाि करें जो अपलायिशीला (न्दस्थर) हैं तथा नजिके आशीवावद से मैं प्रचुर िि-सम्पदा, पशु, सेवक एवं अश्व प्राप्त करूँगा।

ॐ महादेव्यै ि शवद्महे शवषुणुपत्न्यै ि धीमशह ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रीोदयात् ।।

हम महादेवी से हानदवक प्राथविा करते हैं, तथा भगवाि् नवषुणु की पत्नी का ध्याि करते हैं। वे देवी लक्ष्मी हमें (जीवि के परम लक्ष्य की ओर) निदेनशत करें।

ॐ शान्वन्तः शान्वन्तः शान्वन्तः ।।